चमत्कृत करती भाषा-संस्कृत

लेखक
सुरेश चौधरी

शुक्तिका प्रकाशन

चमत्कृत करती भाषा-संस्कृत

CHAMTKRIT KARTI BHASA SANSKRIT

ISBN : 978-93-94660-99-1

प्रकाशक :

शुक्तिका प्रकाशन

स्वामित्व : ए एंड ए इंटरप्राईजेज

पी 516/4, बी.एल. साहा रोड

कोलकाता–700038

मो. : 8582965531

लेखक : **सुरेश चौधरी 'इंदु'**

संस्करण 2023

© सर्वाधिकार लेखकाधीन

मूल्य : 350/–

शब्द सज्जा : परमानंद झा, मो. : 95550–21641

मुद्रक : मिश्का इन्फोटेक, कोलकाता

स्व-कथ्य

प्रिय स्नेहीजन

प्रस्तुत पुस्तक 'चमत्कृत करती भाषा संस्कृत' एक लेखों का संग्रह है

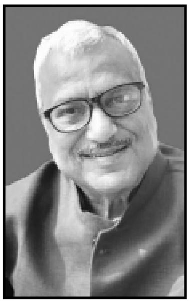

जिसमें मेरे लिखे लेखों के अतिरिक्त मैंने उपलब्ध कुछ विषय से संबंधित लेख संग्रहित करने का लोभ किया है। चूंकि संस्कृत आज अपने ही देश में सर्वाधिक उपेक्षित है तो यह आवश्यक हो गया कि संस्कृत, इसकी महत्ता, इसके चमत्कार को जनमानस तक पहुँचाऊं। पिछले 3 से 4 वर्षों से इस विषय पर कार्य कर रहा हूँ। सैकड़ों पुस्तकों का अध्ययन किया, जिसमें संस्कृत के विद्वानों के लिखे ग्रन्थों के अलावा विभिन्न विदेशी समीक्षकों के लेख भी पढ़े।

पढ़ने के क्रम में यह समझ आया कि जहाँ हमारे देश के बुद्धिजीवी वर्ग अब संस्कृत को लुप्त होती भाषा मान बैठे हैं, वहीं विदेशों में संस्कृत के प्रति पिछले 10 वर्षों में अत्यधिक झुकाव हुआ है। खासकर नासा, जर्मनी के वैज्ञानिकों, डेनमार्क के भाषाविद् जनों में एवं अन्य विकसित देशों में। एक तरफ नासा के शोधकर्ता यह मानते हैं कि संस्कृत आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस के लिए सर्वाधिक उपयुक्त भाषा है, क्योंकि इसका उच्चारण हू-ब-हू वही है जो कि लिखा जाता है। उदाहरणस्वरूप अंग्रेजी के know को भी नो और no को भी no कहेंगे। अत: कोई कंप्यूटर सिग्नल वौइस् मैसेज में नो कहता है तो रिसीवर know या no कुछ भी रिसीव कर सकता है, परंतु संस्कृत में 99% शुद्धता है। परंतु वे इसे प्रयोग में लाने में कतराते हैं कारण कुछ भी हो।

संस्कृत के सबसे प्राचीन भाषा होने के प्रश्न पर भी पाश्चात्य शोधकर्ता भ्रमित हैं। वे शायद अंतर्मन से तो समझते हैं कि यह ही सर्वाधिक प्राचीन

है, परंतु कहीं ग्रीक को तो कहीं इजिप्शियन को तो कहीं किसी अन्य को सर्वाधिक प्राचीन जीवित भाषा बतलाते हैं। एक बात और देखी भाषा वैज्ञानिकों के लेखों में की जब विदेशी भाषा की बात आती है तो काल अनुसार वे भाषा के क्रमशः परिवर्तन को उसी भाषा के संभाग में मानते हैं जबकि संस्कृत और वैदिक संस्कृत को दो अलग भाषा मानते हैं। यथार्थ यह है कि भाषा विज्ञान का सबसे अनुपम और सबसे प्राचीन चमत्कार वैदिक संस्कृत को अष्टाध्यायी के माध्यम से परिष्कृत कर आधुनिक संस्कृत बनाया गया और यह आधुनिक भी उनकी सबसे प्राचीन भाषा से भी प्राचीन है।

अगर हम संस्कृत के इतिहास को देखें तो पाएंगे कि भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार प्री प्रोटो इंडो यूरेशियन भाषा से भाषा का विज्ञान आरम्भ होता है और अन्तोलियन को प्राचीनतम भाषा मानते हैं, परंतु उसका अस्तित्व समाप्त हो चुका है। इनके अनुसार वैदिक संस्कृत का अस्तित्व भी समाप्त हो चुका है। इंडो ईरानियन ग्रुप में संस्कृत प्राचीनतम है और हेलेनिक ग्रुप में तसकोनियन और ग्रीक।

इनके अनुसार ग्रीक ईशा से 2900 वर्ष पुरानी और संस्कृत ईशा से 1500 वर्ष पुरानी है। चलिए यह इनका आंकलन है इससे सच्चाई नहीं छुपती।

आर्यजन के विविध कुलों में दो कुलों के लोग, जो आगे चलकर भारतीय (इंडियन) और ईरानी शाखाओं के नाम से विख्यात हुए। सौरशेनी जो कि संस्कृत के बगत बाद कि बोली है, बोलने वाले प्राचीन भारतीय अफगानिस्तान होते हुए ईरान तक बस गए। पारसी धर्म वाले पश्चिमी भारत, विशेष रूप से आज के गुजरात और राजस्थान को ही अपने पूर्वजों का मूल स्थान मानते थे। अवेस्तास, विशेषतः अवेस्ता के गाथा साहित्य और वैदिक संस्कृत में निकटतम समानता वर्तमान है। भेद केवल ध्वन्यात्मक (फ़ोनेटिक) और निरुक्तगत (लेज़िसकोग्राफ़किल) हैं। अवेस्ता भाषा

सबसे ज्यादा पश्चिमी भारत यथा गुजरात की सौरशेनी प्राकृत से सबसे ज्यादा मिलती है। जैसे 'स' का 'ह' हो जाना। गुजरात को संस्कृत में सौराष्ट्र भी बोलते हैं जो सौरशेनी प्राकृत में जौरास्त्र हो जाती है।

अवेस्ता के तत्वों में हिन्दू धर्म के ऋग्वेद के साथ समानता है; उदाहरण के लिए-अहुरा से असुर, देवा डेवा से, अहुरा मज़्दा से हिंदू एकेश्वरवाद, वरुण, विष्णु और गरुड़, अग्नि से अग्नि मंदिर, स्वर्गीय रस सोमा - हाओमा नामक पेय से, समकालीन भारतीय और फारसी युद्ध से देवासुर का युद्ध, अरिया से आर्य, मिथरा से मित्र, द्यौष्पिता और ज़ीउस से बृहस्पति, यज्ञ से यज्ञ, नरिसंग से नरसंगसा, इंद्र, गंधर्व से गंधर्व, वज्र, वायु, मंत्र , यम, अहुति, हमता से सुमति इत्यादि।

संस्कृत आमतौर पर कई पुरानी इंडो-आर्यन किस्मों को जोड़ती है। इनमें से सबसे पुरातन ऋग्वेद में पाया जाने वाला वैदिक संस्कृत है, जो 3000 ईसा पूर्व और 2000 ईसा पूर्व के बीच रचित 1,028 पदों का एक संग्रह है। पाश्चात्य शोधकर्ताओं के अनुसार यह इंडो-आर्यन जनजातियों द्वारा आज के उत्तरी अफगानिस्तान और उत्तरी भारत में हुई और फिर अफगानिस्तान से पूर्व की ओर पलायन हुई।

भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में संस्कृत को भी सम्मिलित किया गया है। यह उत्तराखण्ड और हिमाचल प्रदेश की आधिकारिक राजभाषा है। आकाशवाणी और दूरदर्शन से संस्कृत में समाचार प्रसारित किए जाते हैं। कतिपय वर्षों से डी.डी. न्यूज (DD News) द्वारा वार्तावली नामक अर्धहोरावधि का संस्कृत-कार्यक्रम भी प्रसारित किया जा रहा है, जो हिन्दी चलचित्र गीतों के संस्कृतानुवाद, सरल-संस्कृत-शिक्षण, संस्कृत-वार्ता और महापुरुषों की संस्कृत जीवनवृत्तियों, सुभाषित-रत्नों आदि के कारण अनुदिन लोकप्रियता को प्राप्त हो रहा है।

संस्कृत भाषा का व्याकरण अत्यन्त परिमार्जित एवं वैज्ञानिक है। बहुत

प्राचीनकाल से ही अनेक व्याकरणाचार्यों ने संस्कृत व्याकरण पर बहुत कुछ लिखा है। किन्तु पाणिनि का संस्कृत व्याकरण पर किया गया कार्य सबसे प्रसिद्ध है। उनका अष्टाध्यायी किसी भी भाषा के व्याकरण का सबसे प्राचीन ग्रन्थ है।

वैदिक संस्कृत भाषा में व्यापक प्राचीन साहित्य आधुनिक युग में बच गया है। यह प्रोटो-इंडो-यूरोपीय और प्रोटो-इंडो-ईरानी इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए जानकारी का एक प्रमुख स्रोत रहा है। पूर्व-ऐतिहासिक युग में काफी पहले, संस्कृत एक पूर्वी ईरानी भाषा, एवेस्टन भाषा से अलग हो गई थी। पृथक्करण की सटीक सदी अज्ञात है, लेकिन संस्कृत और अवस्थन का यह अलगाव 1800 ईसा पूर्व से पहले निश्चित रूप से हुआ था। एवेस्टन भाषा प्राचीन फारस में विकसित हुई। जोरोस्ट्रियनिज्म की भाषा थी, लेकिन सासैनियन काल में एक मृत भाषा थी। प्राचीन भारत में स्वतंत्र रूप से विकसित वैदिक संस्कृत, पाणिनि के व्याकरण और भाषायी ग्रंथ के बाद शास्त्रीय संस्कृत में विकसित हुई। बाद में कई संबंधित भारतीय उपमहाद्वीप भाषाओं में, जिनमें बौद्ध, हिंदू और जैन धर्म के प्राचीन और मध्यकालीन साहित्य पाए जाते हैं।

हिन्दुओं के प्राचीन वेद धर्मग्रन्थ वैदिक संस्कृत में लिखे गए हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में श्रौत जैसे सख़्त नियमित ध्वनियों वाले मंत्रोच्चारण की हज़ारों वर्षों पुरानी परम्परा के कारण वैदिक संस्कृत के शब्द और उच्चारण इस क्षेत्र में लिखाई आरम्भ होने से बहुत पहले से सुरक्षित हैं। वेदों के अध्ययन से देखा गया है कि वैदिक संस्कृत भी सैंकड़ों वर्षों के दीर्घ काल में बदलती गई। ऋग्वेद की वैदिक संस्कृत, जिसे ऋग्वैदिक संस्कृत कहा जाता है, सब से प्राचीन रूप है। पाणिनि के नियमीकरण के बाद की शास्त्रीय संस्कृत और वैदिक संस्कृत में पर्याप्त अन्तर हुआ। इसलिए वेदों को मूल रूप में पढ़ने के लिए संस्कृत ही सीखना पार्याप्त नहीं, बल्कि वैदिक संस्कृत भी सीखनी

पड़ती है। अवस्ताई फ़ारसी सीखने वाले विद्वानों को भी वैदिक संस्कृत सीखनी पड़ती है, ज़्योंकि अवस्तई ग्रन्थ कम बचे हैं और वैदिक सीखने से उस भाषा का भी अधिक विस्तृत बोध मिल जाता है।

एक विडम्बना यह भी है कि वे ये मानते हैं कि संस्कृत अवेस्ता से पहले की भाषा है। चूंकि दोनों भाषा बिल्कुल मिलती-जुलती है, इसलिए वे कहते हैं कि संस्कृत और ऋग्वेद फारस ईरान से भारत आये और आर्य भी। वे यह मानने को तैयार नहीं कि भारत मूल से भी तो संस्कृत परिवर्तित होती हुई अवेस्ता बन कर ईरान फारस जा सकती है।

यह तय है संस्कृत के इतिहास की बात। अब कई विद्वान प्रश्न यह उठाते हैं कि वेदों में चरवाहों और गड़ेरियों के गीत हैं और उसमें वर्णित विज्ञान और ज्ञान को बिल्कुल नहीं मानते। मैंने एक लेख वेद और विज्ञान में वस्तुस्थिति को समझाने का प्रयत्न किया है।

विभिन्न उदाहरणों, आलेखों और ग्रन्थों के माध्यम से इस पुस्तक में मैंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि देव वाणी संस्कृत अद्भुत है, अद्वितीय है, अनुपम है और संस्कृत भारत की आत्मा है और यही हमें विश्व गुरु बनाएगी। ❍❍❍

सविनय निवेदित।

—सुरेश चौधरी

विक्रम संवत् 2080

गणेश चतुर्थी

तसानुसार 19 सितम्बर, 2023

चमत्कृत करता वैदुष्य!

■ डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र

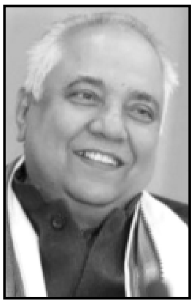

गाँव के मिडिल स्कूल और रेवतीपुर (गाज़ीपुर) की संस्कृत पाठशाला में प्रारम्भिक शिक्षा, वाराणसी के डीएवी कॉलेज और बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के आर्ट्स कॉलेज में उच्च शिक्षा। एम.ए. (अंग्रेज़ी), एम.ए. (हिन्दी), 'यथार्थवाद और हिन्दी नवगीत' प्रबंध पर पी.एच.डी. की उपाधि। 1966 से हिन्दी और मातृभाषा मैथिली के प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में निबंध, कहानी, गीत, रिपोर्ताज़ आदि का नियमित प्रकाशन। 'सृजनगाथाडॉटकॉम' पर 'जाग मछन्दर गोरख आया' स्तम्भ लेखन। देश के शीर्षस्थ नवगीतकार और राजभाषा विशेषज्ञ। राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय काव्य मंचों के अग्रगण्य गीत-कवि। 1969 से आकाशवाणी और दूरदर्शन के सभी केंद्रों पर काव्यपाठ।

सुरेश चौधरी जी जब तक कलकत्ता आये, तब तक मैं वहाँ से बोरिया-बिस्तर बाँधकर हिमालय की गोद में चला आया था। अपने कलकत्ता प्रवास में मैं वहाँ के मारवाड़ी समाज से बहुत घुल-मिल गया। उनका रहन-सहन, साहित्य-संगीत-कला के प्रति अटूट प्रेम और रघुकुल रीति जैसी वचनबद्धता मेरे लिए चमत्कृत करने वाली थी। ये सारी बातें अगर किसी एक व्यक्ति में सिमटी हुई मिलें तो आप उन्हें सुरेश चौधरी कह सकते हैं। कितना कुछ करते रहते हैं वे! वयस्कता की प्रवृत्तियों को धता बताते हुए वे दिन-रात कविता लिखते हैं, दूसरों से लिखवाते हैं, उनका प्रचार-प्रसार करने के लिए इंटरनेट की अद्यतन सुविधाओं का उपयोग करते हुए ऑनलाइन गोष्ठियां आयोजित करते हैं।

चौधरी जी इतने पर ही नहीं रुके। भारत की सबसे बड़ी समस्या इसका मूल से कट जाना है। जैसे जड़ से कटा हुआ वृक्ष जीवन-रस न पाकर मुरझाकर सूख जाता है, वैसे ही संस्कृत से कटा हुआ भारतीय

समाज बौद्धिक संपदा की दृष्टि से दरिद्र हो गया है। संस्कृत मात्र भाषा नहीं, विद्या है। इस विद्या को पढ़कर विदेशी लोगों ने गत दो सदियों में आविष्कारों की झड़ी लगा दी और हम अपने इतिहास को भी मिथ मानकर अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारते रहे।

भला हो आजादी के अमृत महोत्सव का, जिसने जागरूक भारतीयों में अपने मूल को सींचने और उसकी देखरेख करने की चेतना जगायी। उसी चेतना की लहर से उपजी यह पुस्तक 'चमत्कृत करती भाषा-संस्कृत' वस्तुत: समय की मांग है। यह संस्कृत के प्रति जिज्ञासुओं की ज्ञान-पिपासा को शांत करने के लिए अमृत कलश की भाँति है। मैं स्वयं चमत्कृत हूँ इसे पढ़कर। इसमें क्या नहीं है? संस्कृत भाषा की दुर्लभ विशेषताओं से तो परिचय कराया ही गया है, ज्ञान-विज्ञान की भाषा संस्कृत के महान गौरव ग्रंथों पर भी प्रकाश डाला गया है। यहाँ तक कि वेदों में वर्णित वैज्ञानिक सिद्धांतों को भी रेखांकित किया गया है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बारे में हमारे पूर्वजों का ज्ञान इतना अग्रगामी है कि वहाँ तक पहुंचने में आधुनिक विज्ञान को सहस्राब्दियाँ लग जाएँगी। इसी प्रकार हमारी काल-गणना, गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत, ध्वनि विज्ञान, देवनागरी लिपि आदि ऐसी निधि हैं, जिनका उपयोग कर हम विश्व को नेतृत्व दे सकते हैं। वह सिलसिला शुरू भी हो गया है। कई देशों के शीर्ष यानी राष्ट्राध्यक्ष पद पर भारतवंशियों का आसीन होना आने वाली सहस्राब्दी का श्रीगणेश है, जिसमें विश्व पर भारतीय प्रज्ञा राज करेगी। आवश्यकता है अपने गुणों को पहचानने की। संस्कृत वह श्रीयंत्र है, जिसके मूल्य को जितना हम समझेंगे, उतना हम स्वयं मूल्यवान बनेंगे।

निश्चय ही, चौधरी जी धन्यवाद के पात्र हैं कि उन्होंने पूरी सतर्कता से इस पुस्तक की रचना की है। मुझे पूरा विश्वास है कि जिज्ञासु पाठक वर्ग इसे हाथों-हाथ लेगा। ○○○

श्लाघनीय पहल

■ प्रो. (डॉ.) आशुतोष अंगिरस

सह-आचार्य, संस्कृत विभागाध्यक्ष, एस.डी. कॉलेज, अम्बाला कैंट, मानद निदेशक - एस.डी. ह्यूमन डेवलपमेंट रिसर्च एवं ट्रेनिंग सेंटर, पूर्व एन.सी.सी कप्तान, प्रमुख अन्वेषक आईसीएचआर नई दिल्ली, कई प्रमुख बड़ी परियोजनाओं के प्रायोजक। वेदों के समीक्षक एवं प्रशिक्षक।

प्रस्तुत पुस्तक लेखक का संस्कृत एवं संस्कृति के प्रति अनुराग का प्रत्यक्ष प्रमाण है, जिसमें लेखक ने उदाहरण सहित संस्कृत भाषा के माध्यम से भारतीय संस्कृति के विशद विवेचन करने का प्रयास किया है। वे संस्कृत एवं भारतीय संस्कृति के उच्चतम मूल्यों के विषय में बात करते हुए भाषा संबंधी विश्व संकल्पना की बातें करते हैं।

वास्तव में यदि हम लेखक द्वारा प्रतिपादित तथ्यों के आधार पर बात करें तो संपूर्ण विश्व ने जहां एक ओर संस्कृत भाषा की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है, वहीं भारतीय मनीषा ने भी अपनी प्रतिभा से संस्कृत सहित्य में वर्णित तथ्यों के माध्यम से यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि भारतीय द्वारा प्रतिपादित ज्ञान की परम्परा अकाट्य है। उदाहरण के तौर पर यदि हम गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त की बात करें तो यह बात महत्त्वपूर्ण है कि जिन तथ्यों की जानकारी पश्चिमी सभ्यता अभी प्राप्त कर रही है, वैसे उदाहरण हमारे वेद एवं पुराण साहित्य में बहुत पहले ही वर्णित किये जा चुके हैं। आयुर्वेद, ब्रह्माण्डीय एवं खगोलीय

विद्याओं का वर्णन इन्हीं का साक्षात् उदाहरण है। जहां भाषा एवं साहित्य के माध्यम से रस एवं शब्द चमत्कृत को प्रदर्शित किया गया, वहीं दूसरी ओर संसार में संभवत: कोई ऐसी विधा होगी जिस पर भारतीय मनीषा ने गंभीरतापूर्वक विचार नहीं किया होगा।

वर्तमान रूप में पुस्तक चौदह अध्यायों में विभाजित है, जिसमें संस्कृत भाषा की महत्ता से लेकर इसमें रचित विभिन्न महाकवियों द्वारा वर्णित शब्द चमत्कार को यथासंभव प्रदर्शित करने का प्रयास किया गया है। इसी के साथ संस्कृत भाषा विषयक रोचक तथ्यों को संग्रहीत कर तृतीय अध्याय में रखा गया है। चतुर्थ अध्याय वैदिक आधार पर गणित के मूल सिद्धान्तों का विवेचन करता है एवं वर्तमान में भौतिक शास्त्र में प्रचलित फार्मूला 'पाई आर स्क्वेयर' के माध्यम से वैदिक गणित की अर्थवत्ता बताता है। संस्कृत शास्त्रों में वर्णित विभिन्न तथ्यों को संग्रहीत कर छठे अध्याय में प्रस्तुत किया गया है, जबकि वैदिक मन्त्रोच्चार विधि का मनुषय मस्तिष्क पर क्या प्रभाव पड़ता है, का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता एवं वर्ण सौष्ठव पर अष्टम अध्याय में विषद रूप से चर्चा की गयी है। प्राचीन भारतीय भाषाओं के विषय में विचार नवम् अध्याय तथा संस्कृत शास्त्रों में वर्णित ज्ञान-विज्ञान संबंधी विभिन्न रोचक तथ्यों को दशम् अध्याय में संग्रहीत किया गया है। वेद व्यासीय परम्परा का वर्णन करते हुए लेखक वैदिक मन्त्रों के संकलन एवं संग्रह की वैज्ञानिकता पर विशद रूप से एकादश अध्याय में प्रकाशित करता है। द्वादश अध्याय में ब्रह्माण्ड एवं जगत के उद्भव एवं विकास के वैदिक विचार को प्रकट करते हैं जो कि वर्तमान में प्रचलित कास्मोलोजी का मूल रूप है। त्रयोदश अध्याय में लेखक वैदिक ध्वनि विज्ञान की चर्चा करता है जो वर्तमान में फोनोलाजी या ध्वनिविज्ञान का आधार है। अन्त में संस्कृत शास्त्र में वर्णित अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्यों को बड़े ही रोचक ढंग से प्रतिपादित करता है, जो लेखक की मौलिकता को प्रदर्शित करता है।

पुस्तक का मूल उद्देश्य वर्तमान संदर्भों में भारतीय मनीषा द्वारा संस्कृत में वर्णित समस्त साहित्य के विषय में लोक चेतना को जागृत एवं अंकित करने का प्रयास किया गया है जो अपने आप में अनूठा है एवं श्लाघनीय पहल है। आशा करता हूं कि पाठकगण इस पुस्तक के माध्यम से अपनी भाषा एवं संस्कृति को जानने में सफल होंगे। इस कार्य के लिए डॉ. सुरेश जी चौधरी साधुवाद एवं विद्वतापूर्ण प्रशंसा के अधिकारी हैं। निरन्तर ज्ञान साधना एवं कर्म निष्ठा उनके व्यक्तित्व को परिभाषित करती है जो कि आज के समाज में विरल ही हैं। ❍❍❍

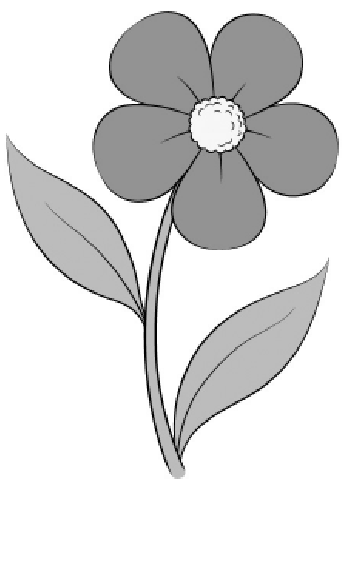

अनुक्रमणिका

1.	संस्कृत की महत्ता	14
2.	चमत्कारी करती भाषा संस्कृत	21
3.	संस्कृत के बारे में रोचक तथ्य	105
4.	ऋग्वेद में π का मान 32 अंक तक शुद्ध है	108
5.	गुरूत्वाकर्षण सिद्धान्त	114
6.	संस्कृत का जादू	118
7.	संस्कृत मंत्रों के उच्चारण से बढ़ती है याददाश्त	122
8.	आर्य भाषा की लिपि देवनागरी	124
9.	पुरानी भाषा कौन-सी संस्कृत या पाली	127
10.	संस्कृत ज्ञान-विज्ञान की भाषा	134
11.	वेदव्यासों द्वारा वेद मन्त्रों का संकलन	145
12.	आधुनिक विज्ञान से संबंधित ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति	147
13.	वेदों में है ब्रह्माण्ड का ध्वनि विज्ञान	148
14.	आश्चर्यजनक किंतु सत्य!	151
15.	वेद और विज्ञान	157

संस्कृत की महत्ता

सृष्टि की रचना के बाद सर्वप्रथम जिस शब्द का नाद हुआ वह 'ऊं' था। अ उ म से युक्त यह शब्द संस्कृत व्याकरण का श्री गणेश था। वेदों की संरचना संस्कृत के श्लोकों से हुई। जिस समय वेद रचे गए, ज्ञान एवं साहित्य कितना परिपक्व था, इस बात से ही पता चलता है कि प्रत्येक श्लोक/सूत्र/ऋचा छंद बद्ध थे। प्रथम वेद ऋगवेद 4500 BCE में लिखा गया। यह लोकमान्य तिलक के शोध का निष्कर्ष है, जबकि पाश्चात्य शोध करता इसे 1600 BCE बताते हैं। जो भी हो अनुष्टप छंद से प्रारंभ यह महान ग्रन्थ कितना वैज्ञानिक है, इस पर अभी भी शोध चल रहा है एवं शोध के नतीजे नित नए खुलासा कर रहे हैं। कल्पना कीजिये जब संस्कृत साहित्य इतना उन्नत था, उस समय अन्य भाषाओं का जन्म भी नहीं हुआ था। पाश्चात्य वैज्ञानिक, शोधकर्ता अपने स्वार्थवश इस बात को न मानें पर सत्य यही है कि वेद सबसे पुराने ग्रन्थ हैं एवं संस्कृत में लिखे गए हैं। संस्कृत साहित्य का इतिहास बहुत बड़ा है। सम्राट विक्रमादित्य के राज्यकाल में कहते हैं संस्कृत आम बोलचाल की भाषा थी, जो धीरे-धीरे लुप्त होती गयी। कहते हैं अष्टाध्यायी संस्कृत का पहला व्याकरण कोष था, जो आठ अवस्थाओं में धातुओं को विभाजित कर विस्तार दिया। पश्चिमी साहित्यकारों के अनुसार इसका समय 450 वर्ष bce बताया गया है। पाणिनि लिपि संस्कृत की मुख्य लिपि थी, ऐसा शोधकर्ताओं का कथन है, परन्तु शास्त्रों में देवनागिरी ही मानी गयी है।

संस्कृत अथवा संस्कृतम्, भारत एक शास्त्रीय भाषा है, इसे देववाणी अथवा सुरभारती भी कहा गया है। इस भाषा के वर्ण ऋषि-मुनियों द्वारा गहरे ध्यान के बाद इस दुनिया को प्राप्त हुए। यह दुनिया की सबसे पुरानी उल्लिखित भाषा कही जाती है। संस्कृत में ही सनातन दर्शन/धर्म से संबंधित ग्रंथ लिखे

गए हैं। बौद्ध धर्म (विशेषकर महायान) तथा जैन धर्म के भी कई महत्वपूर्ण ग्रंथ संस्कृत में लिखे गए हैं। आज भी धार्मिक यज्ञ और पूजा संस्कृत में ही होती है।

संस्कृत को विश्व की अन्य भाषाओं की जननी माना जाता है। दुनिया भर में सिर्फ संस्कृत ही एक ऐसी भाषा है, जो पूरी तरह सटीक एक्यूरेट है। इसका कारण इसकी सर्वाधिक शुद्धता है।

एक अध्ययन के अनुसार जर्मनी, डेनमार्क, स्वीडेन में संस्कृत पर सबसे अधिक शोध हो रहे हैं। संस्कृत की पाण्डुलिपि से सूत्रों का अध्ययन कर उनके गूढ़ रहस्य को अनावृत किया जा रहा है। पिछले डेढ़ शतक में भारत में अंग्रेजों ने हमारी सोच, शिक्षा पद्धति को इस तरह बदल दिया कि हम अंग्रेजी पद्धति के गुलाम होकर रह गए। नतीजा यह हुआ कि जो अनमोल खजाना ग्रंथों के रूप में हमारे पास था, उससे विमुख हो गए। इसका फायदा कुछ कर्मकांडी ज्ञानियों ने स्वार्थ सिद्धि के लिए किया एवं इस भाषा पर अपना एकाधिकार जता दिया। आजकल बच्चों को संस्कृत पढ़ना हेय समझा जाने लगा। अगर हम इस भाषा को नहीं पढ़ेंगे तो कैसे हम उस ज्ञान के पिटारे को खोल पाएंगे, जिसकी कुंजी मात्र संस्कृत है।

संस्कृत और संस्कृत साहित्य की संस्कृति वास्तव में संश्लेषण और आत्मसात की संस्कृति है। संस्कृत साहित्य का संदेश शांति और आपसी समझ की और व्यक्ति और समाज के सामंजस्यपूर्ण विकास के मूल्यों, मानव जाति की एकता, मानवतावाद में से एक है। संश्लेषण, सद्भाव और सुलह संस्कृत की संस्कृति का सार शामिल है, क्योंकि यह भारत के लोकाचार को पुनर्जीवित करने में मदद करती है।

हमारे प्राचीन साहित्य में सकारात्मक विज्ञान के विषय में वैज्ञानिक अंतर्दृष्टि और शोध के परिणामों के घर – यह खजाना अनलॉक करने के लिए हमें मदद मिलेगी। इसके अलावा यह कंप्यूटर संचालन में एक माध्यम

खासकर नई तकनीक के लिए एक भाषा के रूप में संस्कृत का प्रयोग करने में हमें मदद मिलेगी।

इसके अलावा यह भारत की विभिन्न भाषाओं को मजबूत करने में मदद मिलेगी। महात्मा गांधी जी ने ठीक ही कहा था-संस्कृत हमारी भाषाओं के लिए गंगा नदी की तरह है। क्षेत्रीय भाषा को अपने जीवन शक्ति और सत्ता को खोते धरातल में संस्कृत के एक प्राथमिक ज्ञान की आवश्यकता है। संस्कृत ही हमारी भाषा की समस्या का समाधान है। सच है इस भाषा की प्रमुख उपयोगिता के लिए व्याकरण के नियमों और अन्य अनुप्रयोगों को आसान बनाने के लिए संस्कृत विद्वानों को कठिनतम कार्य करना होगा।

संस्कृत अब संस्कृत के शोधकर्ताओं, पाठकों और छात्रों को लाभान्वित कर रही हैं, जिसके तार कंप्यूटर के साथ संबंधित है। इस दिशा में अब अधिक विकसित आधुनिक उपकरणों के माध्यम से आसानी से पहुंचा जा सकता है जो कि संस्कृत शिक्षा के लिए सकारात्मक दृष्टिकोण है। आने वाले दिनों में संस्कृत हमारी राष्ट्रीय विरासत और पुराने पारंपरिक मूल्यों की धरोहर के रूप में सामने आ पायेगी।

संस्कृत भारत की सभी भाषाओं की जननी है। आप ध्यान से परीक्षण करेंगे तो पाएंगे की सभी भाषाएं संस्कृत के शब्दों के तद्भव रूप में है-जैसे बंगाल में जल, दक्षिण में नीर, उत्तर में पानी। अत: अगर संस्कृत को राष्ट्र भाषा बनाया जाय, संशोधन के साथ तो मेरे मतानुसार किसी को कोई विरोध नहीं होगा एवं संस्कृत का पुनरुत्थान भी होगा। भारत की एक आम भाषा के रूप में इसे विकसित किया जा सकता है। आज भारत के किसी भी क्षेत्र में जाईये-विवाह, जन्म, मरण सभी कार्यों में संस्कृत के मंत्रोच्चारण से ही विधि होती है। क्यूँ न हम इसे एक सूत्र के रूप में प्रयोग करें।

प्रमुख बात तो यह है कि संस्कृत एक ऐसी भाषा है जिसे आज के युग में कंप्यूटर शीघ्रता एवं सरलता से अपना सकते हैं या यह कहें कि संस्कृत

ही एकमात्र कंप्यूटर की मित्र भाषा है। कंप्यूटर को किसी भी भाषा को अपनाने हेतु एक निश्चित सूत्र चाहिए जो उच्चारण के अनुसार लिखा जाता हो यानि जैसा बोलते हैं वैसा ही लिखा जाय। यह गुण विश्व में चीनी भाषा में भी है एवं वहीं यह संस्कृत में उससे भी ज्यादा है। चीनी भाषा वालों ने तो इसे कंप्यूटर की भाषा स्वीकार कर सारे सॉफ्टवेयर विकसित कर लिए पर हम अंग्रेजी-हिंदी के मध्य फंस कर रह गए हैं। नासा के शोधकर्ता रिक ब्रिग्गस ने अपने शोध पत्र नॉलेज रिप्रजेंटेशन इन संस्कृत एंड आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस नामक शीर्षक (आर्टिफिशियल इन्टेल्लिगेंस मैगज़ीन स्प्रिंग 1985#39 वोल: 6.न:1) में जो बातें लिखी है। वे सभी को आश्चर्यचकित करने वाली थी एवं गहन अध्ययन के पाश्चात्य नासा ने इसे मान्यता दे दी एवं संस्कृत भाषा के 60000 ताड़ पत्र पर संस्कृत में लिखे श्लोकों को संग्रह कर उन श्लोकों को सुलझाने पर कार्य आरंभ कर दिया। रिक ब्रिग्गस के शोध पात्र के अनुसार कंप्यूटर को बाइनरी सिस्टम में लिखी भाषा ही आवश्यक है एवं पाणिनि एवं अस्थाध्यानी के संस्कृत व्याकरण के समस्त सूत्र बाइनरी में हैं। रिक ब्रिग्गस के अनुसार कंप्यूटर को वे भाषा स्वीकार्य नहीं हैं जो इंसान एक-दूसरे से बोलचाल में व्यवहार में आता है। उसने यह चुनौती के रूप में कहा कि कम से कम एक स्वाभाविक (नेचुरल) भाषा है जो आर्टिफिशियल भाषा के रूप में विभिन्न तरंग पथ एवं योजनानुसार निर्धारित पथ पर भेजी जा सकती है एवं जिसे कंप्यूटर आसानी से ग्रहण कर सकता है। वह संस्कृत के अलावा और कोई नहीं है।

किसी भाषा को कंप्यूटर के लिए मित्र होने हेतु निम्नलिखित गुण होने चाहिए :-

कोई भी व्यक्तव्य सरलता से वैयाकरण जाल में टूट जाय या वैयाकरण संचन व्यूह की रचना कर सके।

जो सरलता से डाटा व्यूह की रचना कर सके। स्वाभाविक रूप से मानव

द्वारा पठनीय हो।

जो व्यक्तव्य कंप्यूटर में डाला जाय वही वापस आये न कि विकृत रूप में।

अगर कोई अंतर हो तो भी कम से कम हो।

संस्कृत में यह सारी खूबियाँ हैं। संस्कृत अत्यधिक तार्किक ढांचे में रचित है एवं इसका व्याकरण की सूक्षमता अद्भुत है। इसकी वाक्य रचना अपरिवर्तनीय है।

कंप्यूटर में संस्कृत के शब्द व्यूह को साथ रख देने मात्र से यथोचित फल मिल जाता है। रिक ब्रिग्गस के शब्दों में :-

''संस्कृत इज ए ब्रिअल्लेंट लैंग्वेज, आय एम् नोट किद्डिंग एंड नायदर एम् आय बीईंग सर्कास्टिक। इट रेअली इज दी मोस्ट प्रेसयिज लैंग्वेज इन एक्सिस्तेंस। विथ लैटिन बेंग ज़्लोज सेकंड। हाउ एवर आईटी इज नोट अ परफेज़्ट लैंग्वेज एंड आईटी इज नोट नेचुरल आयदर।''

अन्य वैज्ञानिकों ने भी बहुत शोध किये। कमोबेस सभी रिक ब्रिग्गस के शोध से सहमत नजर आये। अत: यह कहना गलत न होगा कि पाणिनि द्वारा संस्कृत की परिभाषा एवं व्याकरण अद्वितीय है, जिसने संस्कृत को अनमोल बना दिया है। यह दुर्भाग्य ही कहेंगे की भारत भूमि जो संस्कृत की जननी रही, वहाँ यह उपेक्षित है।

संस्कृत के बारे में आश्चर्यजनक तथ्य —

1. कंप्यूटर में इस्तेमाल के लिए सबसे अच्छी भाषा।

   संदर्भ : फोर्ब्स पत्रिका, 1987

2. सबसे अच्छे प्रकार का कैलेंडर जो इस्तेमाल किया जा रहा है, हिंदू कैलेंडर है। (जिसमें नया साल सौर प्रणाली के भूवैज्ञानिक परिवर्तन के साथ शुरू होता है)

   संदर्भ : जर्मन स्टेट यूनिवर्सिटी

3. दवा के लिए सबसे उपयोगी भाषा अर्थात् संस्कृत में बात करने से व्यक्ति स्वस्थ और बीपी, मधुमेह, कोलेस्ट्रॉल आदि जैसे रोग से मुक्त हो जाएगा। संस्कृत में बात करने से मानव शरीर का तंत्रिका तंत्र सक्रिय रहता है जिससे कि व्यक्ति का शरीर सकारात्मक आवेश (Positive Charges) के साथ सक्रिय हो जाता है।

संदर्भ : अमेरीकन हिन्दू यूनिवर्सिटी (शोध के बाद)

4. संस्कृत वह भाषा है जो अपनी पुस्तकों-वेद, उपनिषदों, श्रुति, स्मृति, पुराणों, महाभारत, रामायण आदि में सबसे उन्नत प्रौद्योगिकी (Technology) रखती है।

संदर्भ : रशियन स्टेट यूनिवर्सिटी, नासा आदि

(नासा के पास 60,000 ताड़ के पत्ते की पाण्डुलिपि है जो वे अध्ययन कर उपयोग कर रहे हैं।)

(असत्यापित रिपोर्ट का कहना है कि रूसी, जर्मन, जापानी, अमेरिकी सक्रिय रूप से हमारी पवित्र पुस्तकों से नई चीजों पर शोध कर रहे हैं और उन्हें वापस दुनिया के सामने अपने नाम से रख रहे हैं। दुनिया के 17 देशों में एक या अधिक संस्कृत विश्वविद्यालय संस्कृत के बारे में अध्ययन और नई प्रौद्योगिकी प्राप्त करने के लिए है, लेकिन संस्कृत को समर्पित उसके वास्तविक अध्ययन के लिए एक भी संस्कृत विश्वविद्यालय इंडिया (भारत) में नहीं है।)

5. दुनिया की सभी भाषाओं की माँ संस्कृत है। सभी भाषाएँ (97 प्रतिशत) प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस भाषा से प्रभावित है।

संदर्भ : यूएनओ

6. नासा वैज्ञानिक द्वारा एक रिपोर्ट है कि अमेरिका छठी एवं 7वीं पीढ़ी

के सुपर कंप्यूटर संस्कृत भाषा पर आधारित बना रहा है, जिससे सुपर कंप्यूटर अपनी अधिकतम सीमा तक उपयोग किया जा सके। परियोजना की समय सीमा 2025 (छठी पीढ़ी के लिए) और 2034 (7वीं पीढ़ी के लिए) है। इसके बाद दुनिया भर में संस्कृत सीखने के लिए एक भाषा क्रांति होगी।

7. दुनिया में अनुवाद के उद्देश्य के लिए उपलब्ध सबसे अच्छी भाषा संस्कृत है। संदर्भ : फोर्ब्स पत्रिका, 1985
8. संस्कृत भाषा वर्तमान में 'उन्नत किर्लियन फोटोग्राफी' तकनीक में इस्तेमाल की जा रही है। (वर्तमान में उन्नत किर्लियन फोटोग्राफी तकनीक सिर्फ रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका में ही मौजूद हैं। भारत के पास आज 'सरल किर्लियन फोटोग्राफी' भी नहीं है।)
9. यूनेस्को ने भी मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की अपनी सूची में संस्कृत वैदिक जाप को जोड़ने का निर्णय लिया है। यूनेस्को ने माना है कि संस्कृत भाषा में वैदिक जेपी मानव मन, शरीर और आत्मा पर गहरा प्रभाव पड़ता है।
10. संस्कृत केवल एक भाषा नहीं है, अपितु संस्कृत एक विचार है। संस्कृत एक संस्कृति है, शांति है, सहयोग है-वसुदैव कुटुम्बकम् की भावना है।
11. विद्वान संस्कृत के वर्ण की उत्पत्ति सौर परिवार के प्रमुख सूर्य के एक ओर से 9 रशमियाँ (beam of lights) निकलती हैं और चारों ओर अलग-अलग फैलती हैं। इस प्रकार 36 रशमियाओं के स्वर 36 वर्णों के जनक हैं।

source : निजी शोध एवं गूगल व अन्य सामग्री से उधृत।

○○○

चमत्कृत करती भाषा संस्कृत

संस्कृत के कुछ चमत्कार जिसे मैंने
सोशल मीडिया पर लगातार पोस्ट किया
था, वह उसी रूप में प्रस्तुत है :-

भाग-1

जब हम कहते हैं संस्कृत एक मात्र ऐसी भाषा है जिसके प्रत्येक अक्षर या वर्ण का अर्थ विभिन्न अवस्थाओं में परिवर्तित होता है तो पाश्चात्य जगत के लोग नहीं मानते। आईये हम आज से संस्कृत के उस आयाम को आपलोगों के समक्ष प्रस्तुत करेंगे जो आज तक बहुत कम लोगों को ज्ञात है। हमारे आचार्यों, ऋषि-मुनियों ने संस्कृत में कैसे-कैसे विलक्षण प्रयोग किये हैं, जिसे देखकर आप चकित रह जाएंगे।

संस्कृत की भाषा एवं व्याकरण को समझना एवं उसके कई अर्थों में से सही अर्थ निकालना एक बौद्धिक व्यायाम है, यह हमारे आचार्य आदि ने बखूबी किया है।

कालिदास, भृतहरि, माघ, श्रीहर्स इत्यादि महान संस्कृत के विद्वानों ने अधमकाव्य में रचित काव्य को समझना और अर्थ निकालना एक गुत्थी है, एक पहेली है, यह विधा संस्कृत में ''चित्रकाव्य'' कहलाती है जो अलंकार शास्त्र की एक विधा है। यह विधा विश्व की किसी भी अन्य भाषा में पाना असंभव है। आईये प्रारंभ करते हैं आज से हर दिन एक नई जानकारी। ○○○

भाग-2

संस्कृत की अद्भुत एवं चमत्कारी रचनाएँ जो संस्कृत को विश्व की अन्य सभी भाषाओं से उत्कृष्ठ बनाती है।

वर्ण चित्र :-

वर्णों के एक अद्भुत क्रम में लिख कर एक चित्र बनाना इस विधा की खूबी है। आईये देखते हैं एक उदाहरण, निम्न श्लोक में सभी 33 व्यंजन वर्मा को उनके नियत प्राकृतिक क्रम में रख कर केवल स्वर परिवर्तित कर यह श्लोक बनाया है, क ख ग घ .....ऐसे लिखते हुए ह तक।

देखिए कमाल—

कः खगौघांचिच्छौजा झांञ्ग्योऽटौठीडडंढणः।
तथोदधिन पफबार्भीर्मयोऽरिल्वाशिषां सहः॥

वह कौन है, पक्षी प्रेमी, कुशाग्रता में शुद्ध, दूसरों की शक्ति को चुरा लेने में माहिर, दुश्मनों के बल को नाश करने वालों में अग्रणी, अति तीव्र निर्भय, वह कौन है जो सागर को भी भर दे ? वह माया का सम्राट आशीर्वाद का संग्रहालय और दुश्मनों का नाशक है।

है न यह कलाकारी। क्या यह कलाकारी कहीं अन्य किसी भाषा में हो सकती है। नमन हमारी संस्कृति, नमन हमारी संस्कृत, नमन हमारे पौराणिक आचार्य। ❍❍❍

कल दूसरा चित्र देखेंगे.....

—सुरेश चौधरी

भाग-3

संस्कृत की अद्भुत एवं चमत्कारी रचनाएँ जो संस्कृत को विश्व की अन्य सभी भाषाओं से उत्कृष्ठ बनाती है।

आज हम उस वर्ण चित्र को देखेंगे जो सिर्फ संस्कृत भाषा ही कमाल कर सकती है। 33 वर्णों में से मात्र 3 वर्ण के सहारे पूरा श्लोक रच दिया गया। वे तीन वर्ण हैं द, न, व।

देवानां नन्दनो देवो नोदनो वेदनिंदिनां
दिवं दुदाव नादेन दाने दानवनंदिनः ।।

दंडी द्वारा रचित काव्यों की समीक्षा नामक पुस्तक से महाकवि डंडी की चित्र में से एक वह परमात्मा (विष्णु) जो दूसरे देवों को सुख प्रदान करता है और जो वेदों को नहीं मानते, उनको कष्ट प्रदान करता है। वह स्वर्ग को उस ध्वनि नाद से भर देता है, जिस तरह के नाद से उसने दानव (हिरण्यकशिपु) को मारा था।

इस तरह हम संस्कृत भाषा के एक से बढ़ कर एक चमत्कार देखेंगे। कल मात्र दो वर्णों से रचे श्लोक को देखेंगे। ○○○

धन्यवाद।

—सुरेश चौधरी

भाग-4

संस्कृत में कितने चित्र काव्य हो सकते हैं, जब यह खोज-खोज के पढ़ने लगा तो मस्तिष्क के तन्तु हिलने लगे। अद्भुत है हमारी देव वाणी। शब्दों का ऐसा चमत्कार कोई सोच भी नहीं सकता। इस श्रृंखला के बारे में सोच यह था कि पांच-सात दिन में पूरी कर लूंगा पर पता नहीं अब कब तक चलेगी, क्योंकि नित नए चमत्कार मिल रहे हैं।

आईए आज 33 में से दो वर्ण चुन कर बने इस श्लोक को देखें।

भूरिभिर्भारिभिर्भीराभूभारैरभिरेभिरे।
भेरीरे भिभिरभ्राभैरभीरुभिरिभैरिभाः॥

शिशुपाल वधमहाकवि माघ

अर्थ :- निर्भय हाथी जो की भूमि पर भार स्वरूप लगता है। अपने वजन के चलते, जिसकी आवाज नगाड़े की तरह है और जो काले बादलों सा है। वह दूसरे दुश्मन हाथी पर आक्रमण कर रहा है।

आईये कल हम एक ही वर्ण से लिखे श्लोक का आनंद लेंगे, तब तक के लिए शुभरात्रि। ○○○

—सुरेश चौधरी

भाग-5

कल मैंने जब यह पोस्ट डाली तब मित्र यतीश जी ने पूछा-शोध कर रहे हैं ज़्या ? शोध तो बड़े-बड़े स्कॉलर, पीएचडी होल्डर या विद्वजन करते हैं। मैं इनमें से कोई नहीं बस अति जिज्ञाषु जीव हूँ, कुछ पढ़ता हूँ तो उसकी तह तक जाने का प्रयास करता हूँ। इसी प्रयास के तहत उपनिषदों, वेदों को पढ़ा। फिर पौराणिक कथाओं और घटनाओं को डिकोड करके उसका सही अर्थ निकालने का प्रयास किया और कर रहा हूँ।

एक लेख जो शायद स्वीडन के किसी शोधकर्ता का है उसे पढ़ रहा था, उन्होंने लिखा कि विश्व में आज भी संस्कृत की 3 करोड़ से ज्यादा पांडुलिपि मौजूद हैं, जबकि नालन्दा में इतनी ही जला दी गयी थी। उन्होंने यह भी लिखा की "sanskrit has more than 700 hundred metered poetry system." इसका अर्थ शायद यह होगा की संस्कृत में 700 से अधिक छंद हैं। उनकी बात को आगे बढ़ाते हुए लिखना चाहूंगा कि 1207 छंदों का विवरण तो मेरे पास है। आईये आज एक वर्ण के श्लोक को देखें, यह श्लोक केवल 'न' वर्ण के प्रयोग से लिखा गया है।

न नोननुन्नो नुन्नैनो नाना नानानना ननु।
नुन्नोऽनुन्नो ननुन्नैनो नानेना नुन्ननुंन्ननुन।।

महाकवि भैरवी द्वारा रचित किरातर्जुनीमयी से उधृत

वह आदमी आदमी नहीं जो एक छोटे आदमी से आहत हो। वैसे ही आदमी आदमी नहीं जो छोटे आदमी को आहत करे, आहत व्यक्ति आहत नहीं कहलायेगा अगर उसका स्वामी आहत नहीं है और जो आहत करता है वह पहले ही घायल है और वह आदमी नहीं।

क्या प्रेरक संदेश इस वर्ण चित्र में बना है। नमन है संस्कृत जो ऐसे कमाल के सर्जन में समर्थ है। ○○○

—सुरेश चौधरी

भाग-6

कल हमने देखा एक वर्ण से पूरे श्लोक का गठन–वह वर्ण था 'न'। मन में यह प्रश्न उठता है कि 'न' वर्ण बहुत कर्ण प्रिय है और खूब व्यवहार में आता है, अत: रचना कर ली गयी होगी। संस्कृत का चमत्कार सर्वव्यापी है। आज हम एक वर्ण की ही दूसरी रचना देखते हैं और यह वर्ण है 'द'।

कल बहुत से मित्रों ने संस्कृत के चमत्कार की इस शृंखला को बहुत सराहा। आपके प्रोत्साहन से मुझे और अंदर जाकर पढ़ने का हौसला मिलता है। कृपया यह आशीर्वाद देते रहिएगा। आईये अब 'द' वर्ण के श्लोक को पढ़ें :-

दाददो दुद्दुद्दादी दाददो दूददीददोः।
दुद्दादं दददे दुद्दे दादाददददोऽददः॥

महाकवि माघ द्वारा रचित शिशुपाल वध से उधृत

अर्थ :- श्रीकृष्ण जो हर वरदान के दाता हैं, जो कुत्सित सोच के विनाशक हैं, जो मन एवं बुद्धि को शुद्ध करने वाले हैं, जिनकी भुजाएं भ्रष्ट एवं दूसरों को दुख देने वाले व्यक्ति की संहारक हैं, वे उस व्यक्ति को वेदना देने हेतु अपने तीर छोड़ते हैं।

है न एक अद्भुत चमत्कृत कर देने वाली रचना। आपकी टिप्पणी, समीक्षा और सुझाव मुझे आगे लिखने में मार्गदर्शन करेंगे। ○○○

—सुरेश चौधरी

भाग-7

कल एक वर्णीय श्लोक पर बहुत से मित्रों ने उत्साहवर्धक प्रतिक्रियाएं दी। लोगों में यह भी उत्सुकता रही कि जो श्लोक मैं उधृत कर रहा हूँ, उसके स्रोत क्या है ? किनके लिखे हैं इत्यादि। उपयुक्त जिज्ञासा है, पिछले 7 भागों में जिन 6 श्लोकों को लिखा हूँ उसके स्रोत अवश्य दूंगा पर आज से हर श्लोक के साथ कवि का नाम, विवरण और कृति का नाम और संभव हुआ तो श्लोक संख्या भी देने का प्रयास करूँगा।

इसके पहले संस्कृत की कुछ बातें बताना चाहता हूँ। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैं संस्कृत का कोई ज्ञाता नहीं हूँ बल्कि एक अध्येता मात्र हूँ। संस्कृत के महाकाव्यों में तीन महाकाव्यों को वृहदत्रयी कहा गया है। वे हैं–आचार्य भरवी रचित किरातर्जुनीय, माघ रचित शिशुपाल वध एवं श्रीहर्स द्वारा रचित नैषधीय चरित। ये तीनों महाकाव्य संस्कृत में वाल्मीकि रामायण के स्थान तक नहीं पहुंच पाए हों, पर उनसे कम भी नहीं हैं। इसी प्रकार तीन महाकाव्यों को लघुत्रयी कहा गया है और ये तीनों महाकाव्य कालिदास द्वारा रचित हैं। ये हैं–रघुवंशम, मेघदूतम, कुमारसंभव।

आज जिस श्लोक की चर्चा कर रहा हूँ वह शिशुपाल वध से लिया हुआ है, जिसे माघ ने लिखा है। माघ 13वीं सदी के कवि एवं राजस्थान के श्रीमाली ब्राह्मण परिवार से थे। यह श्लोक 19वें सर्ग का तीसरा श्लोक है। इसकी विशेषता यह है कि इसके चारों चरण में अलग-अलग एकवर्णीय हैं।

जजौजोजाजिजिज्जाजी
तं ततोऽतितताततुत्।
भाभोऽभीभाभिभूभाभू-
रारारिररिरीररः॥

भावार्थ :- महान योद्धा कई युद्धों के विजेता, शुक्र और बृहस्पति के समान तेजस्वी, शत्रुओं के नाशक बलराम, रणक्षेत्र की ओर ऐसे चले मानो चतुरंगिणी सेना से युक्त शत्रुओं की गति को अवरुद्ध करता हुआ शेर चला आ रहा हो।

वर्णानुसार अर्थ समझ आये तो मुझे भी सूचित कीजियेगा। अर्थ मैंने किसी के भाष्य से लिया है। ❍❍❍

नमन!

—सुरेश चौधरी

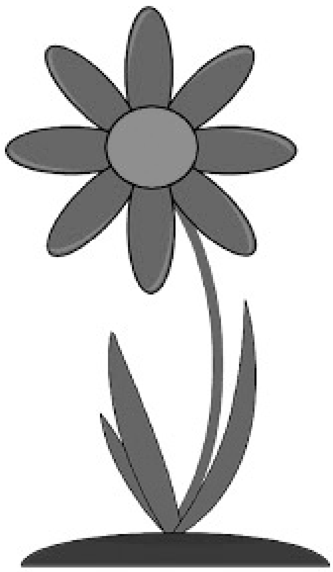

भाग-४

स्थान चित्र :-

आज हम जानेंगे संस्कृत भाषा में कैसे स्थान चित्र का प्रयोग किया गया है। काव्य की भाषा में स्थान चित्र उसे कहा गया है जहां केवल एक व्यंजन समूह का प्रयोग करके या किसी व्यंजन समूह को छोड़ कर श्लोक लिखा जाय। प्रस्तुत श्लोक केवल कण्ठवय समूह के वर्ण को प्रयोग करके लिखा गया है।

अगा गाङ्गागाङ्गकाकाकगाहकाघककाकहा
अहाहाङ्क खगाङ्कागकङ्कागखगकाकक।

ओह तुम कई देशों में यात्रा करने वाले यात्री, घने मोड़ वाली गङ्गा की तीव्र लहरों में नहाने वाले, तुम्हें संसार के दुख भरे नाद का कोई ज्ञान नहीं है। तुममें मेरु पर्वत तक जाने की क्षमता है। तुम इन चंचल इंद्रियों के बस में नहीं हो। तुम पाप को नाश करने वाले हो। तुम इस धरा पर आ गए हो।

यह श्लोक मैंने जर्मनी के शोध के एक पत्र से लिया है, जिसका शीर्षक है—"INTERESTING AND AMAZING CREATION OF SANSKRIT"

आशा है यह शृंखला भी आपको आकर्षक लगी होगी। मैंने इस श्लोक का स्रोत जानने की बहुत कोशिश की पर मुझे स्रोत नहीं मिला। किसी मित्र को ज्ञात हो तो बताने की कृपा अवश्य करें। ○○○

—सुरेश चौधरी

भाग-१

कल की पोस्ट का स्रोत और रचियेता का ज्ञान मुझे नहीं है। आदरणीय बुद्धिनाथ मिश्र जी ने कहा अगर शुद्ध श्लोक मिले तो शायद वे कुछ मदद कर सकें। मुझे बहुत अच्छा लगा कि मेरी पोस्ट को इतने बड़े-बड़े साहित्यकार मनीषी ध्यान से पढ़ रहे हैं। मैं आप सब गुणीजनों से यही निवेदन करूँगा कि आप अपना स्नेह यूँ ही मुझ पर बनाएं रखें। आज स्वर चित्र के बारे में कुछ विचार कर लें।

चित्र कवित्व में शब्द चित्र एक विभाग है, फिर उसमें कई शाखाएं हैं। इन शाखाओं में स्वर चित्र एक है।

स्वर चित्र में भी दो विभाग है-एक ह्रस्व स्वर और दूसरा दीर्घ स्वर। ह्रस्व स्वर चित्र में एक स्वर, दो स्वर लेकर श्लोक बनाना, ऐसा तीन, चार स्वरों को लेकर श्लोक बनाना एक कला ही कही जा सकती है।

आईये हम इसी कला में महाराजा भोज द्वारा रचित सरस्वती कंठाभरण से यह श्लोक देखें। इसमें दो स्वर लेकर श्लोक बनाया गया है। एक स्वर 'इ' है और दूसरा 'अ'।

श्लोक के आदि चरण में 'इ' स्वर को उत्तर चरण में 'अ' स्वर का प्रयोग हुआ है।

इस श्लोक को ह्रस्व द्विस्वर चित्र कहते हैं—

क्षिति स्थिति मिति क्षिप्ति विधि विन्निधि सिद्धि लिट्
मम त्र्यक्ष नमद्क्ष हर स्मरहर स्मर

ओ स्वामी शिव तीन नयनों के धारक, अस्तित्व के ज्ञाता, सृष्टि के मापक एवं संहारक, अष्ट सिद्धि नव निधि के मालिक, आप वे हैं जिसने दक्ष एवं कामदेव का संहार किया।

पुनः मैं आग्रह करूँगा की मेरा प्रयास संस्कृत को जन-जन तक पहुंचाने का है। इस प्रयास को आप सब गति दें, ताकि देववाणी संस्कृत विश्वव्यापी बने। आप सभी से आग्रह है कि आपके पास जो भी संस्कृत से संबंधी जानकारी है, जो जनहित के लिए उपयोगी है या मिले तो मुझे भेजने की कृपा करें। ○○○

—सुरेश चौधरी

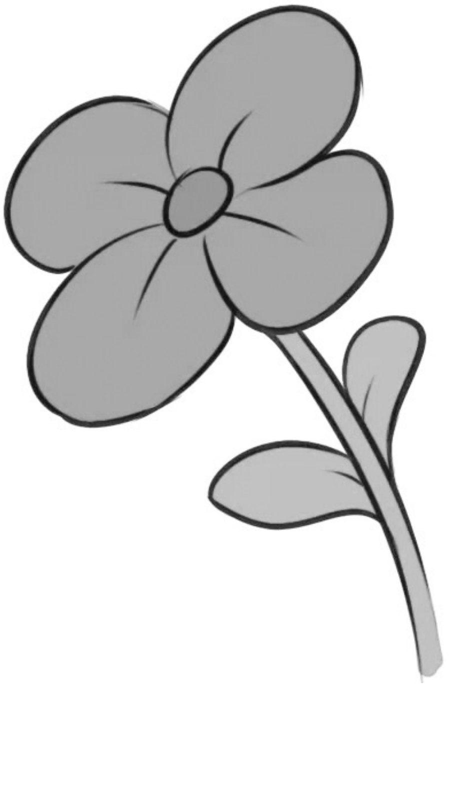

भाग-10

आईये आज महासुभाषित सागर से पुनः सरस्वती कन्ठाभरण के एक श्लोक लिए हैं, जो केवल एक स्वर पर आधारित है। यहां यह बताना चाहूंगा कि इस ग्रंथ की रचना 13वीं सदी में हुई थी। चित्र कवित्व में स्वर चित्र का यह श्लोक अनुपमेय है।

इस श्लोक में चार पादों में एक स्वर – 'उ' लेकर रचना की गयी है—

उरुगुं द्युगुरुं युत्सु चुक्रुशु स्तुष्टुवुः पुरु
लुलुभुः पुपुर्षुर्मुत्सु मुमुहुर्नु मुहुर्मुहुः॥

अर्थ :- उरु विवेकशील को कहते हैं।

वाणी के स्वामी बृहस्पति की शरण में देवगण जब युद्ध के लिए प्रस्थान किये, तब आये जो स्वर्ग में देवताओं के उपदेशक हैं। उन्होंने बृहस्पति की प्रार्थना की ताकि वे ऐसा करके खुश और शक्तिशाली रहें एवं बार-बार बेशुध न हों।

उपरोक्त श्लोक का वाचन एक टोंग ट्विस्टर है। किसी को अपनी वाणी शुद्ध करनी हो तो ऐसे श्लोक को जोर-जोर से पढ़ें। उच्चारण अपने आप शुद्ध हो जाएगा।

संस्कृत में अनेकों ऐसे कमाल छिपे हैं। हमें बस तलाशने की जरूरत है।

सादर नमन!

ooo

—सुरेश चौधरी

भाग-11

आज आपको संस्कृत भाषा के ऐसे चमत्कार के बारे में बताते हैं जिसे जानकर आप दांतों तले अंगुली दबा लेंगे। यह श्लोक एक ही व्यंजन और एक ही स्वर में लिखा गया है। जब तक आप इसका संधि विच्छेद नहीं करेंगे तब तक आपको यह बकवास लगेगा।

yayayayayayayayayayayayayayayaya
yayayayayayayayayayayayayayayaya

कूल, ना? ओह, रुकिए... यह गलत स्क्रिप्ट में है। देवनागिरी में यह रहा—

यायायायायायायायायायायायामायाया
यायायायायायायायायामायायामाया।।

शायद यह अभी भी स्पष्ट नहीं है। तो एक स्पष्टीकरण क्रम में है।

क्या किया जाना चाहिए। वाक्य को ठीक से तोड़ना है – संस्कृत में अवाय नामक प्रक्रिया :

यायाया, आयो, यायाया, आयो, आया, अयाय, अयाय, अयाय, अयायअयाय, अयाया, यायाय, आयायाय, आया, या, या, या, या, या, या, या।

या अंग्रेजी में समतुल्य ('ए' नीचे का अर्थ 'आ' ध्वनि के लिए होता है जैसे cAr में) :

yAyAyA, Ay, yAyAyA, Ay, AyAy, ayAya, ayAy, ayAy, ayAy, ayAy,

ayAy, ayAyA, yAyAy, AyAyA, AyAy, yA, yA, yA, yA, yA, yA, yA, yA, yA

और जब आप इसे ठीक से तोड़ते हैं तो कविता से अर्थ पता चलता है—

भगवान को सुशोभित करने वाली पादुका, जिसे सभी प्राप्त करने की चाह रखते हैं, जो श्रेष्ठ हैं, जो ज्ञान देती है, जो भगवान को प्राप्त करने की इच्छा का कारण बनती है, जो शत्रुतापूर्ण व्यवहार करने वाले सभी को दूर करती है, जो प्रभु को प्राप्त करने का साधन है और जो भव सागर यात्रा करने के लिए उपयोग की जाती है, सभी स्थानों तक पहुँचाती है – यह पादुका भगवान विष्णु के लिए हैं।

प्राचीनकाल में कवि मनोरंजन हेतु ऐसी रचनाएँ कहा करते थे। फिर उसे लोगों को हल करने को कहते थे, जो एक पहेली होती थी। इसे काव्य मनोरंजन कहते थे।

प्रस्तुत श्लोक वेदांत देशरी नामक महान कवि की है जिसका रचनाकाल (1269 –1313) था। इनकी यह पुस्तक पादुका सहस्त्रं बहुत विख्यात हुई थी, क्योंकि इसके 1000 श्लोक सभी चित्र काव्य में लिखे गए थे।

कल पुन: एक नए चमत्कार के साथ प्रस्तुत होऊंगा। तब तक के लिए नमस्कार। ○○○

—सुरेश चौधरी

भाग-12

पिछली श्रृंखला में हमने देखा कि मात्र एक वर्ण 'य' के साथ मात्र 'आ' स्वर जोड़कर कैसे श्लोक बना था। आज एक चमत्कार और देखते हैं।

स्वर और व्यंजनों को आपस में खेल खिला कर प्राचीन साहित्यकारों ने चमत्कृत करने वाले श्लोक लिखे हैं। प्रस्तुत श्लोक 'क' और 'ल' को मिलाकार एक विशेष ध्वनि का निर्माण करता है। इस प्रकार के प्रयोग को संस्कृत में अमिता कहते हैं, जहाँ एक ही वर्ण बार-बार प्रयोग किया जाता है।

इस श्लोक में दो व्यजनों के अनेक पर्याय आये हैं।

इस प्रकार की रचना शब्दालंकार में वृत्त्यनुप्रास कहते हैं। देखिए—

बकुलकलिकाललामनि कलकण्ठीकलकलाकुले काले काले
कलया कलावतोऽपि हि कलयति कलितास्त्रतां मदनः

अर्थ :- मदन, प्रेम के देवता, चांद के दाग को भी खूबसूरत शस्त्र की तरह प्रयोग करते हैं। जब बकुल के पौधे चमकते हैं अपनी कलियों के संग, जब कोयल कूकती हैं, नारियां अपनी मधुर आवाज के साथ वातावरण को चमत्कृत कर भर देती हैं।

इस श्लोक को पढ़िए, आप स्वयं महसूस करेंगे की कितनी खनखनाती मधुर ध्वनि निकल रही है।

प्रस्तुत श्लोक सुभाषित नामक पुस्तक से लिया है, जो श्लोक संख्या 303 में लिखा है। रचेता का नाम मुझे नहीं मिला। पुस्तक अरविंदो आश्रम पुडुचेरी से प्रकाशित पुस्तक 'वंडर, दैट इज संस्कृत' का हिस्सा है। ○○○

—सुरेश चौधरी

भाग-13

आज संस्कृत का एक वह पहलू बताने जा रहा हूँ जो न केवल संस्कृत की भाषा समृद्धता को दर्शाता है बल्कि विज्ञान का चमत्कार भी है। कल्पना कीजिये पाई का शुद्ध मूल्य आधुनिक विज्ञानजगत हाल में निकाल सका। जबकि भारतीय आचार्य एवं संस्कृत की समृद्ध शैली इसे ईसा से पूर्व अपने साहित्य में छिपा रखी थी। बस इसे डिकोड करने की आवश्यकता थी। न जाने ऐसे कितने रहस्य छिपे हैं संस्कृत भाषा में।

संस्कृत भाषा की समृद्धता और इसकी वाक्य संरचना का अद्भुत उदाहरण निम्नलिखित श्लोक है, जिसमें pi का मूल्य वह भी 31 अंकों तक बिल्कुल शुद्ध निकाला गया। संस्कृत में एक संख्या प्रणाली है, जिसे कटपय्यादि प्रणाली कहा जाता है। यह प्रणाली कंप्यूटर विज्ञान में ASCII प्रणाली के समान है। वर्णमाला के हर वर्ण के लिए एक संख्या निश्चित की जाती है और जब श्लोक के अक्षरों को उनके क्षेपणादि संख्याओं से बदल दिया जाता है। इस प्रसार प्रणाली से जब हम अंकों को इस श्लोक में परिवर्तित करते हैं तो हमें 31 अंक तक pi का मान एकदम सही प्राप्त होता है।

गोपीभाग्यमधुव्रात-शृङ्गिशोदधिसन्धिग।
खलजीवितखाताव गलहालारसंधर॥

हे कृष्ण! गोपियों के भाग्य, राक्षस मधु के संहारक, मवेशियों के रक्षक, वह जिसने समुद्र की गहराई में जाकर करतब दिखाया, पापियों का नाश करने वाले, कंधे पर हल धारण करने वाले और अमृतपात्र को धारण करने वाले (आप) रक्षा करें।

ग्रहचारी बन्धन 683 ई.पू. और 869 ई.पू. लघुभासकरिवीकरण में निश्चित संख्यावाचक संकेतन की बात कही गयी है, जो कताप्यादि सांख्य के नाम से जाना जाता है।

इस प्रणाली के तहत स्क्रिप्ट के प्रत्येक और प्रत्येक वर्णमाला पर एक संख्या अंकित होती है, जो कि कंप्यूटर में ASCII प्रणाली के समान ही है। जिसको यहाँ दर्शाया गया है—

1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

क ख ग घ अंच छ ज झ यं

टठड ढणत थ दधन

पफब भ म

य रल व श ष स ह

उपरोक्त विधि के आधार पर यदि श्लोक में अक्षरों को संबंधित संख्याओं द्वारा प्रतिस्थापित करते हैं अर्थात् 3 से 'गो', 1 से 'पी', 4 से 'भा' और इसी तरह करें तो निम्नलिखित परिणाम प्राप्त होगा।

31415926535897932384626433832792 यह संख्या स्पष्ट रूप से 32 दशमलव स्थानों तक पाई का मूल्य है।

सचमुच यह चमत्कृत करने वाली संस्कृत ही कर सकती है।

अगली कड़ी में हम अनुलोम विलोम के कुछ उदाहरण देखेंगे।

नमन!

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

भाग-14

कुछ दिनों पूर्व व्हाट्सएप्प पर 'राघवयादवीयम' नामक पुस्तक जिसे कांचीपुरम के कवि वेंकध्वरी ने 17वीं सदी में लिखा था, बहुत जोरों से वायरल हुई और लोग इस कला को देख अचंभित रह गए थे। वास्तव में अनुलोम विलोम लिखने की प्रथा अति प्राचीन है जो ईसा से पूर्व भी पाई गयी है। वेदांत देशरी, दंडी, माघ, श्रीहर्ष, कालिदास इत्यादि सबने इस विधा में लिखने का प्रयास किया है। अंग्रेजी में इसे palindromes कहते हैं। मतलब आगे से पढ़ें या पीछे से एक ही अर्थ निकले, जैसे बचपन में इस प्रकार की पहेली सभी ने बुझाई होगी। मलयालम, eve, noon, जलज, नयन इत्यादि। परंतु पूरा श्लोक मिरर इमेज हो यह बड़ी आश्चर्य की बात है। यह संस्कृत में ही संभव है।

आईये एक श्लोक देखते हैं, यह भी माघ रचित शिशुपाल वध के 19वें सर्ग से लिया गया है। श्लोक संख्या-44 है।

वारणागगभीरा सा साराभीगगणारवा।
कारितारिवधा सेना नासेधा वारितारिका॥

इसमें श्लोक के चार चरणों में दूसरा चरण पहले चरण का प्रतिबिंब है और चौथा चरण तीसरे का और दोनों बिम्बों के अर्थ बिल्कुल अलग हैं एवं वे पूर्ण वाक्य हैं।

अर्थ देखिए—

इस सेना का सामना करना बहुत मुश्किल है, जिसमें बड़े-बड़े पर्वताकार हाथी हैं। यह सेना बहुत महान है और ऐसा नाद करती है जिससे लोगों के दिल दहल जाएं। वह अपने दुश्मनों का वध कर देती है।

दूसरा एक श्लोक और देखें इसमें पहली पंक्ति का विलोम दूसरी पंक्ति है, इसे पदभ्रमक भी कहते हैं।

निशितासिरतोऽभीको न्येजते ऽमरणा रुचा
चारुणा रमते जन्ये को भीतो रसिताशिनि

अर्थ :-

ओ अविनाशी! सच में, आप तीव्र कहर वाली तलवार को बहुत चाहते हो। इस युद्ध में निर्भयी व्यक्ति कभी भी डरपोक से नहीं कांपता, जो कि सुंदर रथों से सज्जित है और मानव को डराने को तत्पर दानवों से भरी है।

यह चमत्कार संस्कृत जैसी समृद्ध भाषा में ही हो सकता है। किसी भी अन्य भाषा में आप ऐसी भाषा विद्वत्ता नहीं पाएंगे।

नमस्कार! कल हम कुछ नए चमत्कार को देखेंगे।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

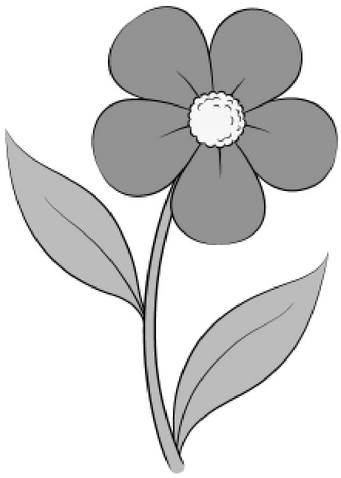

भाग-15

नमस्कार मित्रों ! आज संस्कृत के एक ऐसे चमत्कार के बारे मे चर्चा करेंगे जिसे सोच कर ही हम आश्चर्यचकित हो जाएंगे। हिंदी और संस्कृत के विद्यार्थियों ने यमक अलंकार पढ़ा है। इसमें एक शज़्द के अलग-अलग अर्थ होते हैं, पर ज़्या आप सोच सकते हैं कि एक वाज़्य के भी अलग-अलग अर्थ कैसे हो सकते हैं। जी हाँ ! मैं सच कह रहा हूँ। इसे महा यमक कहते हैं। प्राचीन आचार्यों ने इसका प्रयोग शब्द चित्र के रूप में किया है। प्रस्तुत है एक ऐसा ही श्लोक—

सभासमानासहसापरागात्
सभासमाना सहसा परागात्।
सभासमाना सहसापरागात्
सभासमाना सहसापरागात्॥

—चित्रकाव्यम्

सरस्वती कंठाभरण नामक पुस्तक से यह श्लोक मैंने लिया है। श्लोक संख्या 202। शायद इसके रचियेता प्रज्ञा चक्षु रामभद्राचार्य जी हैं।

इसके प्रत्येक चरण का अर्थ अलग-अलग है। जब तक इसके चरण के वर्णों की वियुक्त नहीं करे गए तब तक हम अर्थ स्पष्ट नहीं निकाल पाएंगे। आईये इसके वर्णों को वियुक्त करते हैं।

1. सभा-मान-आस:-हस (ऐते: सह वर्तत इति), अपरागम अत्ति
2. सभासमाना (भासमानै: सह वर्तत इति) सहसा (मार्गशीर्षेण हेतुना) परागत (रज: कणां) अतति (प्राप्नोति परागत)
3. भा (कांति:) समाना(सरूपा, तै : सह वर्तते) सभासमाना। सहसा। अपरागत (अपरस्मात पर्वतात)
4. एवं भुता असमाना-सभा-सहसा-परागत

अर्थ :-

स्वाभिमान, कांति, आनंद व आक्रामक-प्रवृति से युक्त प्रतिभाशाली लोगों की सभा, मार्गशीर्ष महीने में जब पर्वत शिखर से प्रस्थान करने लगी तो उनके तितर-वितर होने से हवा में चारों तरफ धूल फैल गयी।

नमन है, धन्य है देववाणी संस्कृत। इसके आगे-पीछे कहीं भी कोई भी भाषा नहीं टिक सकती। महा यमक के ये उदाहरण हैं। कल एक और श्लोक पर चर्चा करेंगे। तब तक के लिए नमन।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

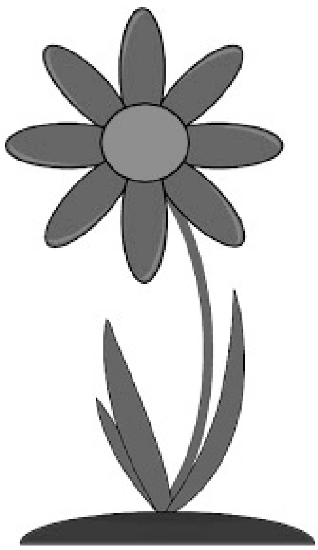

भाग-16

अभी तक हमने संस्कृत काव्य के जितने श्लोक पढ़े, जिसे हम चमत्कार कहते हैं, वे सब ईसा पूर्व के या ईसा से सातवीं-आठवीं शताब्दी के हैं। एक कवि 13वीं शताज़्दी के भी हैं। संस्कृत में जो महाकाव्य बहुत चर्चित हुए उन्हें लघुत्रयी कहते हैं। वे हैं—

1. कुमारसंभवम्
2. मेघदूतम्
3. रघुवंशम्

ये तीनों महाकाव्य कालिदास के लिखे हुए हैं और इनका रचनाकाल 5वीं सदी है।

जबकि जिन्हें वृहदत्रयी कहते हैं, वे हैं—

1. किरातर्जुनीयं-भारवि 6वीं सदी
2. शिशुपाल वधम-माघ कवि 7/8वीं सदी
3. नैषधियचरितं-श्रीहर्स-12वीं सदी

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या संस्कृत की रचनाएँ 12वीं सदी के बाद लुप्त हो गयी हैं। क्या संस्कृत में कोई ऐसे कवि नहीं हुए जो महाकाव्य या संस्कृत में ऐसी कृति लिखें जो कालजयी हो।

जी नहीं। 21वीं सदी में हुए हैं संत जगद्गुरु श्री रामभद्राचार्य जी महाराज, जिन्होंने रामजन्म भूमि मुकदमे की दिशा अपने अकाट्य तर्कों से हिंदुओं के पक्ष में मोड़ दी थी। ये प्रज्ञा चक्षु हैं, जन्म से ही नहीं देख सकते पर सारे वेद, सारे पुराण, उपनिषद इत्यादि इन्हें कंठस्थ हैं। इन्होंने एक महाकाव्य लिखा, जो 21 सर्ग में समाहित है। अन्य महाकाव्य 8, 9, 12 20, 22 में हैं। इन्होंने कहा कि 21 में कोई नहीं, अत: वे 21 का लिखेंगे और अतुलनीय महाकाव्य श्री भार्गवराघवीयम नाम का काव्य लिखा, जिसमें श्रीराम एवं

श्री परशुराम की कथा है। अन्य महाकाव्यों से बढ़कर इन्होंने इस महाकाव्य में 40 प्राकृत छंदों का प्रयोग किया एवं प्राय: सभी अलंकारों का शब्द चित्रों का प्रयोग किया।

आईये इस महाकाव्य के एक महायमक अलंकार को देखें—

पहले जानते हैं महायमक किसे कहते हैं। महायमक अलंकार संस्कृत एवं प्राकृत भाषा में एक ऐसा अलंकार है, जिसमें समान शब्द एक से अधिक बार प्रयुक्त होता है, किन्तु प्रत्येक शब्द का अपना एक विशेष अर्थ होता है। महाकाव्य के तीसरे सर्ग से उद्धृत निम्नलिखित पद्य (3.26) में चार चरण हैं, किन्तु एक ही अक्षर से चार विभिन्न अर्थों का तात्पर्य निकलता है, जिनमें से एक-एक अर्थ की प्रत्येक चरण के लिए कवि ने सुन्दर संयोजना की है। इस प्रकार संपूर्ण काव्य में प्रयुक्त चतुर्विध यमक के प्रयोग को महायमक कहते हैं।

ललाममाधुर्यसुधाभिरामकं ललाममाधुर्यसुधाभिरामकम्।
ललाममाधुर्यसुधाभिरामकं ललाममाधुर्यसुधाभिरामकम्॥

''उन्हें, जो (भगवान् शंकर) भाल पर त्रिपुण्ड के सौन्दर्य से शोभायमान हो रहे थे और जिनके आराध्य देव भगवान श्रीराम थे। उन्हें, जो आभूषणों की शोभा की धुरी (नवोदित चन्द्र के रूप में) धारण कर रहे थे और जो इस आनन्द से मनोहारी दृष्टिगत हो रहे थे। उन्हें, जो अपनी श्रेष्ठता की शक्ति के साथ धर्म के दायित्व के वाहक एवं रक्षक बने हुए थे; और उन्हें, जिन्हें वृषभ (जो धर्म का प्रतीक है) के चिह्न की दीप्ति के आनन्द के कारण भगवान श्रीराम की शरण प्रदान की गई थी।॥ 3.26 ॥

जगद्गुरु रामभद्राचार्य जी जैसे प्रकांड विद्वान के रहते हम कभी नहीं कह सकते की संस्कृत विलुप्त हो रही है। किसी को भ्रम है तो वे इनके ग्रंथ अवश्य पढ़ें और अपने दांतों तले अंगुली दबा चमत्कृत होते रहें। नमन। ○○○

—सुरेश चौधरी

भाग-17

पिछली शृंखला में हमने जगद्गुरु रामभद्राचार्य जी द्वारा रचित महाकाव्य श्री भार्गवराघवीयम के बारे में जाना और उसमें लिखा महायमक हमने पढ़ा। आज हम इसी महाकाव्य से उधृत एकाक्षरी श्लोक को पढ़ते हैं। यह 7वीं सदी के माघ के काव्यों में देखने को मिला था। हैरानी की बात है कि उस युग में भी ऐसे महापंडित हैं, क्या इनके समकक्ष कोई और दूसरा कवि होगा ? आज भारत को बहुत आवश्यकता है ऐसे प्रकांड विद्वानों की ताकि संस्कृत पुनः फले फूले।

श्रीभार्गवराघवीयम् के बीसवें सर्ग में तीन एकाक्षरी श्लोकों (20.92-20.94) की रचना की गई है, जिनमें मात्र एक व्यंजन का प्रयोग किया गया है।

कः कौ के केककेकाकः काककाकाककः ककः।
काकः काकः ककः काकः कुकाकः काककः कुकः॥
काककाक ककाकाक कुकाकाक ककाक क।
कुककाकाक काकाक कौकाकाक कुकाकक॥
लोलालालीललालोल लीलालालाललालल।
लेलेलेल ललालील लाल लोलील लालल॥

''परब्रह्म (कः) [श्री राम] पृथ्वी (कौ) और साकेतलोक (के) में [दोनों स्थानों पर] सुशोभित हो रहे हैं। उनसे संपूर्ण ब्रह्माण्ड में आनन्द निःसृत होता है। वह मयूर की केकी (केककेकाकः) एवं काक (काकभुशुण्डि) की काँव-काँव (काककाकाककः) में आनन्द और हर्ष की अनुभूति करते हैं। उनसे समस्त लोकों (ककः) के लिए सुख का प्रादुर्भाव होता है। उनके लिए [वनवास के] दुःख भी सुख (काकः)

हैं। उनका काक (काकः) [काकभुशुण्डि] प्रशंसनीय है। उनसे ब्रह्मा (ककः) को भी परमानन्द की प्राप्ति होती है। वह [अपने भक्तों को] पुकारते (काकः) हैं। उनसे कूका अथवा सीता (कुकाकः) को भी आमोद प्राप्त होता है। वह अपने काक [काकभुशुण्डि] को पुकारते (काककः) हैं और उनसे सांसारिक फलों एवं मुक्ति का आनन्द (कुकः) प्रकट होता है।''

॥ 20.92 ॥

''हे मेरे एकमात्र प्रभु! आप जिनसे [जयंत] काक के (काककाक) शीश पर दुःख [रूपी दण्ड प्रदान किया गया] था; आप जिनसे समस्त प्राणियों (कका) में आनन्द निर्झरित होता है; कृपया पधारें, कृपया पधारें (आक आक)। हे एकमात्र प्रभु! जिनसे सीता (कुकाक) प्रमुदित हैं; कृपया पधारें (आक)। हे मेरे एकमात्र स्वामी! जिनसे ब्रह्माण्ड (कक) के लिए सुख है; कृपया आ जाइए (आक)। हे भगवन (क)! हे एकमात्र प्रभु! जो नश्वर संसार (कुकक) में आनन्द खोज रहे व्यक्तियों को स्वयं अपनी ओर आने का आमंत्रण देते हैं; कृपया आ जाएँ, कृपया पधारें (आक आक)। हे मेरे एकमात्र नाथ! जिनसे ब्रह्मा एवं विष्णु (काक) दोनों को आनन्द है; कृपया आ जाइए (आक)। हे एक! जिनसे ही भूलोक (कौक) पर सुख है; कृपया पधारें, कृपया पधारें (आक आक)। हे एकमात्र प्रभु! जो (रक्षा हेतु) दुष्ट काक द्वारा पुकारे जाते हैं (कुकाकक); [कृपया पधारें।]''

॥ 20.93 ॥

''हे एकमात्र प्रभु! जो अपने घुँघराले केशों की लटों की एक पंक्ति के साथ (लोलालालीलल) क्रीड़ारत हैं; जो कदापि परिवर्तित नहीं होते (अलोल); जिनका मुख [बाल] लीलाओं में श्लेष्मा से परिपूर्ण है (लीलालालाललालल); जो [शिव धनुर्भंग] क्रीड़ा में पृथ्वी की संपत्ति

[सीता] को स्वीकार करते हैं (लेलेलेल); जो मर्त्यजनों की विविध सांसारिक कामनाओं का नाश करते हैं (ललालील), हे बालक [रूप राम] (लाल)! जो प्राणियों के चंचल प्रकृति वाले स्वभाव को विनष्ट करते हैं (लोलील); [ऐसे आप सदैव मेरे मानस में] आनन्द करें (लालल)।''

॥ 20.94 ॥

आपने स्वयं अनुभूत किया होगा इस चमत्कार को, कल से हम भाषा के एनी चित्रों को देखेंगे, तब तक के लिए सादर अभिवादन।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

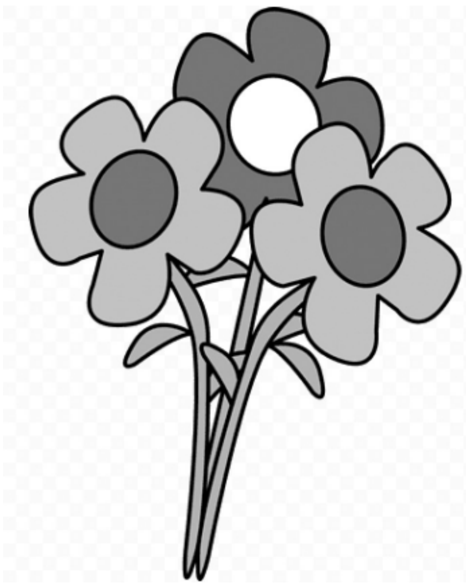

भाग-18

सरस्वती कण्ठभ्रमर ग्रंथ राजा भोज ने लिखा था, जिसमें संस्कृत के चित्रबन्ध के 200 से ज्यादा उदाहरण दिए गए थे। यह पुस्तक मैं खोज रहा हूँ, अगर मिल गयी तो प्रयास करूँगा सभी 200 चित्रों को प्रस्तुत करूँ।

अभी 'वंडर दैट इज संस्कृत' पुस्तक जिसे अरविंदो आश्रम ने प्रकाशित किया था, उससे एक श्लोक लिख रहा हूँ। इस श्लोक को गौमुत्रिका बन्ध कहा जाता है। जैसे गौ मूत्र एक सीधी रेखा में न गिरकर टेढ़ी-मेढ़ी रेखा में गिरता है, जिसे अग्रेंजी में ज़िग ज़ेग कहते हैं। इसकी प्रथम पंक्ति का हर दूसरा वर्ण नीचे वाली पंक्ति के दूसरे वर्ण से मिलता है एवं एक ही होता है और तीसरी पंक्ति एवं चौथी पंक्ति के अल्टरनेट वर्ण एक होते हैं और अच्छी तरह समझने के लिए एक चित्र भी संलग्न कर रहा हूँ।

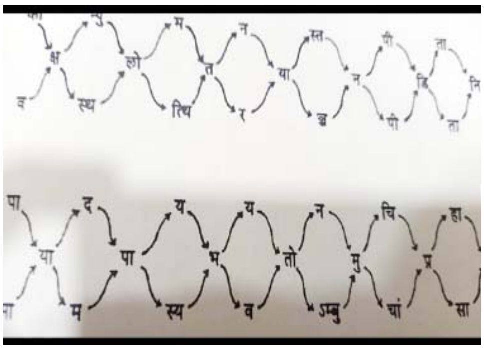

श्लोक है—

कांक्षणपुलोमतनयास्तनपीडितानि

वक्षःस्थलोंत्तिथतरयाञ्चनपीडितानि।

पायादपायभयतोनमुचिप्रहारी

मायामपास्य भवतोऽम्बुमुचाम प्रसारी।।

इंद्र जो गर्जन करते तूफान को अपना अस्त्र बनाता है, जो गगन से बादलों को हटा देता है, जो अपने खास सची के काम और सुख का आनंद लेता है, पुलोमा दैत्य की पुत्री सची, वह इंद्र सभी भ्रम को दूर कर हमें भय और दुर्भाग्य से बचाये।

अब आप उपरोक्त चित्र में देखिए-हर दूसरा अक्षर एक दूसरी पंक्ति के समान है।

कितना दुर्लभ है यह लिखना, ऐसे कितने चित्र बनाये गए हैं। दो सौ का वर्णन उपरोक्त पुस्तक में ही है।

कल दूसरे चित्र को देखेंगे। जाते-जाते बताते चलूं कि प्रसिद्ध कवि केशवदास ने भी कुछ चित्र बन्ध बनाये हैं हिंदी भाषा से, जिनका विवरण बाद में दूंगा।

नमन।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

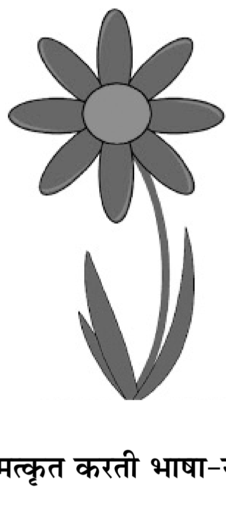

भाग-19

पिछली शृंखला से हम चित्र बंध के बारे में जान रहे हैं। गौमुत्रिका बंध के बारे में हमने जाना। आज हम मुरज बंध के बारे में जानते हैं। मुरज संस्कृत में तबला को बोलते हैं। इस विधा में श्लोक के चारों चरण को सामान्य तरीके से लिखते हैं, फिर ज्यूँ तबले को कसने के लिए रस्सी होती है उस रस्सी के अनुसार अक्षरों को देखें तो हमे पाएंगे की पहली रस्सी के कसाव में श्लोक का पहला चरण है। दूसरी में दूसरा ऐसे चारों चरण कसाव वाली रस्सी में मिल जायेंगे। चूँकि श्लोक से द्ताब्ले की आकृति बनती है, अत: इसे मुरज कहते हैं। ठीक से समझाने के लिए पहले श्लोक को सामान्य तरीके से लिखता हूँ।

सा सेना गमनारम्भे

रसेनासीदनारता।

तारनादजनामत्त

धीरनागमनामया॥

प्रस्तुत श्लोक माघ रचित शिशुपाल वध से लिया गया है।

श्लोक का अर्थ है :-

वह सेना बहुत कुशल थी और जैसे-जैसे आगे बढ़ी, योद्धा नायक बहुत सतर्क थे और अपने कर्तव्यों को बड़ी एकाग्रता से निभाया। उस सेना के सैनिकों ने तेज आवाज की।

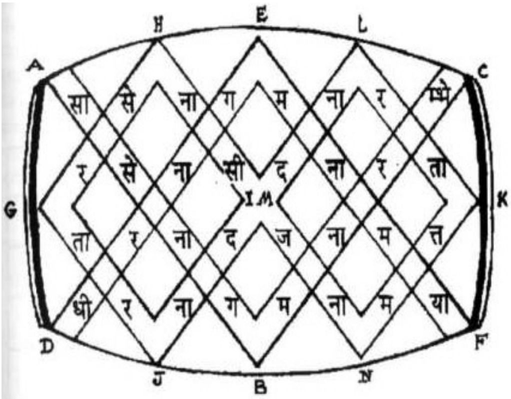

मदमस्त एवं मध्यम गति से चलने वाले हाथियों से सजी थी। सेना में किसी को भी कोई तकलीफ नहीं थी।

अब देखते हैं कि मुरज कैसे बना, उपरोक्त चित्र में ABC को देखें A से B में सा से ना ग आया। B से C में म ना र म्भे आया। इस प्रकार प्रथम चरम बन गया। अब DEF को देखें वैसे ही धी र ना ग-म ना म या इस प्रकार यह अंतिम चरण बना। अब अन्दर की रस्सी से GHIJG देखें र से-ना सी-द ना-र ता बन गया। KLMNK को देखें ता र-ना द-ज ना- म त तीसरा चरण बन गया। इस तरह पूरे मुरज की आकृति बन गयी।

है न यह अद्भुत कमाल संस्कृत भाषा का, साथ ही अनुपम काव्य कौशल आचार्यों का।

आज के लिए इतना ही।

कल फिर मिलेंगे नए चमत्कार के साथ।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

भाग-20

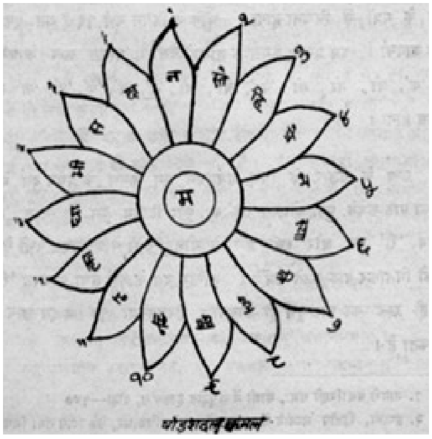

चित्रबंध में मैंने बताया था कि केवल सरस्वती कंठ भरण में ही 200 से अधिक चित्रबंध बताये गए हैं। मैं पुस्तक ढूँढ़ रहा था तभी देश के प्रख्यात कवि एवं मूर्धन्य साहित्यकार डॉ. राहुल अवस्थी जो बरेली में रहते हैं, ने तत्काल सरस्वती कंठभरण पुस्तक की जेपीजी कॉपी भेज दी। यह पुस्तक करीब 900 पृष्ठ की है और संस्कृत में श्लोक हैं, साथ ही अर्थ और भाष्य भी संस्कृत में ही है और मैं ठहरा विज्ञान, अर्थशास्त्र और वित्त पोषण का विद्यार्थी। जो तोड़-मरोड़ कर अर्थ निकाल सका, उसे प्रस्तुत कर रहा हूँ। शीघ्र ही संस्कृत सीखने का प्रयास करूँगा। मेरे संस्कृत के साधक मित्र कोई त्रुटी हो तो इंगित कीजियेगा।

सरस्वती कंठभरण के परिच्छेद 2 के 293वें श्लोक में षोड्स पद कमल निर्माण बताया गया है, निम्नलिखित श्लोक को देखें—

नमस्ते महिमप्रेम नमस्यामति मद्यम।
क्षामसोम नमत्काम धामभीम समक्षम ॥

'म' को न्यास बिंदु मान कर कमल पुष्प के पद बनायें तो उपरोक्त चित्र बनता है, जिसमें 16 पंखुड़ी या कमलपद बनते हैं। कालांतर में कमल चीते 8 पद से 16 पदों तक हिंदी में भी बहुतायत से बनाये गए। केशवदास जी के पांडित्य की पहचान उनकी काव्य विशिष्टता ही थी। इसका विवरण हम आगे करेंगे।

उपरोक्त चित्र में देखिये पत्र 1 में 'न' लिखा है, फिर मध्य बिंदु का 'म' फिर 2 में 'स्ते' फिर मध्य का 'म' 3 में 'हि' फिर 'म' इस प्रकार पूरा श्लोक बन जाता है।

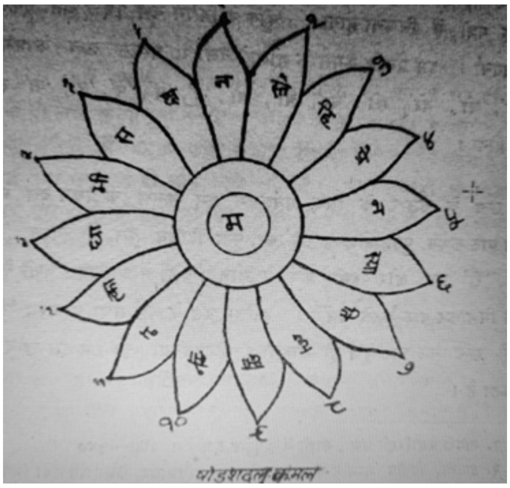

देखने में सरल दिखने वाली यह विधा बहुत जटिल है। श्लोक के मध्य वर्ण को इस प्रकार प्रयोग हो की श्लोक विधा से भी न हटे और अर्थ भी स्पष्ट हो। उपरोक्त श्लोक अनुस्तुभ छंद में लिखा गया है। अनुस्तुभ की विधा भी जीवित है अर्थ भी।

धन्य है देववाणी संस्कृत और धन्य हैं आचार्यगण।

कल हम कमल चित्र के एक अन्य श्लोक को और देखेंगे। नमस्कार! प्रकृति की पूजा करें, उसे खुश करें ताकि यह विपदा यथाशीघ्र दूर हो।

OOO

—सुरेश चौधरी

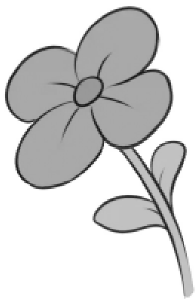

भाग-21

पिछली श्रृंखला में हमने देखा था कि किस तरह श्लोक को लिखा जाता है, जिससे कमल का चित्र बन जाता है। उस कड़ी में हमने 16 दलों के कमल के चित्र को देखा था। इसी तरह विद्वान रचनाकारों ने 6 दलों से लेकर 20 दलों तक के कमल का निर्माण किया है। इस विधा को पद्मबंध कहते हैं। सरस्वती कंठभरण में ऐसे 200 चित्रों का उल्लेख है। वहीं बंधबिंदु पुस्तक में जिन प्रमुख बंधों के समूह का विवरण है, उनमें मुख्य 11 समूह हैं जो इस प्रकार हैं—

पुस्तक में चित्र केवल नाग्बंध एवं पद्मबंध के ही उपलब्ध हैं, अन्य पुस्तकों में भी सीमित चित्र मिलते हैं। सर्वाधिक चित्र मुझे मिले 'चित्र काव्य सैद्धांतिक विवेचन एवं ऐतिहासिक विकास' नामक पुस्तक में जो डॉ. रामदीन मिश्र की लिखी हुई है। इन्होंने बताया है कि बंध बिंदु पुस्तक में जिन चित्र बंध का विवरण है, वे हैं—

षोडशदल पद्म, अष्टदल पद्म, गजबंध, चक्रबन्ध, छत्र बंध, चामर बंध, मर्दल बंध, रथ बंध तथा गौमुत्रिका बंध। मुख्यत: इन बंधों का प्रयोग, दंडी, रूद्रत, अग्नि पुराण, भोज, हेमचन्द्र आचार्य ने किया है।

आज हम एक उदहारण रथ बंध का देखते हैं जिसे आधुनिक युग में कांचीपुरम मठ के डॉ. जी. शंकरनारायण ने किया है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की प्रशस्ति में श्लोक इस प्रकार है—

नगरेषु नरेंद्र यशो विमलं मोदितयुवककुलं दीप्तं।

लभते सर्वकविस्तुतिपुन्जम् विजयैकनायक ते ॥

और बंध संलग्न चित्र में दर्शाया गया है।

आप देखेंगे कि श्लोक को रथ की आकृति में लिखा गया तो मध्य बिंदु से जो वाक़्य बना वह है—नरेन्द्र मोदी विजयते।

संस्कृत भाषा के सागर में जितने गोते लगा रहा हूँ, उतना ही गहरे अंदर जा रहा हूँ और गहराई का कुछ अता-पता नहीं है।

नमन है मेरी देववाणी भाषा संस्कृत।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

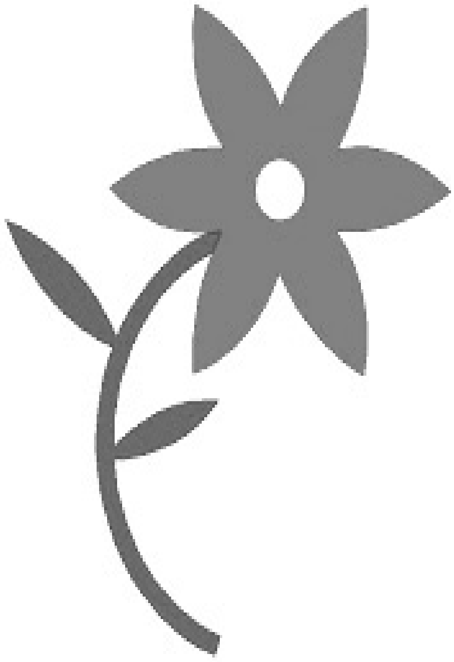

भाग-22

कई प्रकारों के बन्ध को हमने अभी तक देखा। आने वाली शृंखला में हम और भी बन्ध चित्र काव्य के देखेंगे। परंतु आज हम ऐसे चित्रबन्ध के बारे में चर्चा करेंगे जो अद्वितीय है और असामान्य है। इस चित्र काव्य को देखकर समझ कर हम कहेंगे कि भारतीय आचार्यों की प्रतिभाओं को कैसे नकारा गया, कैसे पाश्चात्य विद्वानों को प्रमुखता से प्रचारित किया गया।

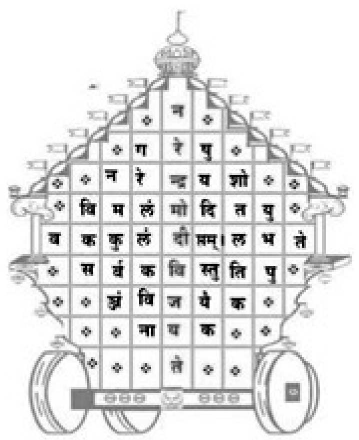

गणित में एक बहुत जटिल सूत्र है जिसे यूलर्स सूत्र या EULAR'S SOLUTION कहते हैं। प्रश्न यह था कि क्या शतरंज के एक कोने से घोड़े की चाल चलते हुए दूसरे कोने पर पहुंचा जा सकता है, जिसमें शतरंज के सारे 64 खाने आ जाएं, मतलब सभी खानों पर एक बार घोड़ा आये। सदियों तक इसका हल नहीं निकाल सके। 17वीं शताब्दी में यूलर जो कि फ्रांस का गणितज्ञ था, उसने यह हल ढूंढ़ा। इसीलिए इसे यूलर की शतरंज चाल भी कहा गया।

स्थि 1	रा 30	ग 9	सां 20	स 3	दा 24	रा 11	ध्या 26
वि 16	ह 19	ता 2	क 29	त 10	ता 27	म 4	ता 23
स 31	त्या 8	दु 17	के 14	स 21	रा 6	सां 25	मा 12
रं 18	ग 15	रा 32	ज 7	प 28	द 13	त्र 22	य 5

भारत में दसवीं शताब्दी में यानी यूलर से 700 वर्ष पूर्व तमिल के एक विद्वान आचार्य हुए हैं, जिन्होंने विष्णु भगवान की खड़ाऊं पर 1000 श्लोक लिखे हैं, जिन्हें पदुकासहस्त्रं नाम दिया गया। ये आचार्य थे देशरी वेदांत,

वैसे तो पूरा ग्रंथ ही चित्र काव्य पर आधारित है, पर एक के बाद एक दो श्लोक में इन्होंने अश्वबन्ध या चतुरङ्गतुरङ्गपदबन्ध: बनाया है। पहले श्लोक को शतरंज के चौसठ खानों में लिख दीजिये फिर अश्व की चाल यानी ढाई घर के हिसाब से चलिए, यह पूरे चौसठ खाने होते हुए दूसरा श्लोक बना देगा। यह उस समस्या का भी हल होगा जिसे 700 वर्ष बाद यूलर ने बता कर विश्व प्रसिद्धि पाई। ये श्लोक हैं—

स्थिरागसां सदाराध्या विहताकततामता।
सत्पादुके सरासा मा रङ्गराजपदं नय ॥19॥

सभी घोर पापियों के पाप को भी धोने वाली ओ ब्रह्म की पावन पादुका तुम समस्त दुखों एवं अनचाहे परिणामों को दूर कर संगीत उत्पन्न कर हमें श्री रंगराजन राम के चरणों में ले चलो। जो श्लोक अश्व चाल से बनेगा वह है—

स्थिता समयराजत्पागतरा मादके गवि
दुंरहसां सन्नतादा साध्यातापकरासरा।

जो अपने सद्‌कर्मों से द्यूतमान हैं, जिसका स्थान चमकती किरणों के मध्य है, जो जरूरतमंदों का सहायक है, जिसकी शरण में आये व्यक्ति को शांति प्रदान करता है, जो सर्वव्यापी है, उस परम पिता ब्रह्म की स्वर्ण पादुका श्री रंगराजन राम के चरणों में ले चले।

इसे और विस्तार से समझने के लिए एक चित्र संलग्न कर रहा हूँ, इसमें प्रत्येक वर्ण के साथ उसमें चाल की संख्या भी दी हुई है। जैसे 1 में 'स्थि' है 2 में 'त' 3 में 'स' 4 में 'म'...इस प्रकार चौसठ वर्ण चौसठ खानों में घोड़े की चाल, जिसे अंग्रेजी में knight मूवमेंट कहते हैं, से पूरे श्लोक का निर्माण करते हैं।

नमो नम:। इस चमत्कार को हम क्या कहेंगे। अगली श्रृंखला में और चमत्कार देखेंगे। तब तक के लिए नमन। ○○○

—सुरेश चौधरी

भाग-23

अभी तक हमने देखा शब्द चित्र, चित्र बन्ध इत्यादि। संस्कृत की एक अन्य विशेषता जिसे पढ़कर अवश्य आश्चर्यचकित हो जाएंगे आप। चित्र बन्ध आप सबको बहुत पसंद आये। कई मित्रों ने लिखा कि और चित्र बन्ध दिखाएं। अवश्य मैं और चित्रों को लेकर आऊंगा। फिर संस्कृत से प्रेरित कुछ हिंदी काव्य चमत्कार भी प्रस्तुत करूँगा। आज एक कथा बताता हूँ।

कालिदास की बुद्धिमता और काव्यधर्मिता के चर्चे पूरे आर्यावर्त में गूंज रहे थे। कुछ द्वेष रखने वाले आचार्यों ने राज्यसभा में कालिदास से पूछ लिया- क्या आप कुछ भी विषय पर रचना लिख सकते हैं। कालिदास के हाँ कहने पर उन्होंने एक ताम्र पत्र लुढ़का दिया, कहा-इससे जो ध्वनि निकल रही है, उसे छंद बद्ध करो। ध्वनि थी—

ठंठंठंठंठठंठंठंठ

कालिदास ने इस ध्वनि को ध्यान से सुना तो देखा की यह ध्वनि ठीक इन्द्रवज्रा छंद से मिलती है, जिसके हर चरण में ग्यारह वर्ण होते हैं और वर्ण का वृत होता है—

221 221 121 22

कालिदास ने यह श्लोक रच डाला।

रामाभिषेके मदविह्वलाया हस्ताच्च्युतो हेमघटस्तरुण्याः।

सोपानमासाद्य करोति शब्दं ठंठंठंठंठठंठंठंठ।।

अर्थ :- श्रीराम के राज्याभिषेक के समय एक दासी द्वारा एक स्वर्ण घट सीढ़ियों पर गिर पड़ा, जो कि ठाति प्रसन्न और मुदित थी। सीढ़ियों से लुढ़कते हुए वह स्वर्ण पात्र जिस मधुर ध्वनि को कर रहा था, वह थी **ठंठंठंठंठठंठंठंठ।।**

चमत्कार इसमें यह है कि संस्कृत भाषा में ही एक ध्वनि को ऑन्द्रवज्र

जैसे दुरह छंद में बन्ध सकते हैं और अंतिम चरण मिल जाने के पश्चात बाकी के तीन चरण का निर्वाह कर दिया जाता है। इस विधा को संस्कृत में समस्या पूर्ति भी कहते हैं। इस समस्या विधा में कवि को अंतिम चरण दे दिया जाता है, जिसका कोई भी अर्थ नहीं निकलता या कहें की यह चरण सुनने में बकवास लगता है, पर जिन्हें चरण दिया जाता है वह कवि उसको सार्थक बनाकर श्लोक को ऐसा बना देता है जिससे एक अर्थ निकल सके।

अगली शृंखला तक के लिए विदा। नमन।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

15 अप्रैल, 2020

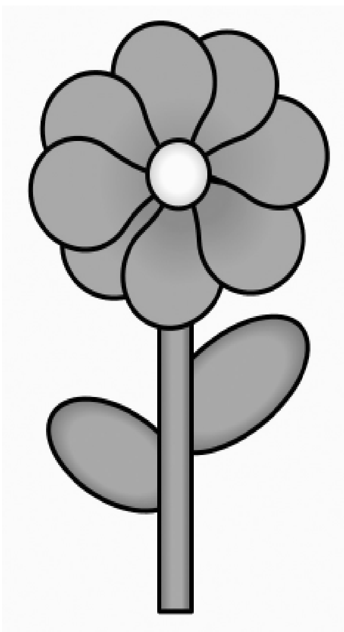

भाग-24

पिछली शृंखला में हमने समस्या पूर्ति श्लोक के बारे में पढ़ा और यह भी पढ़ा की कैसे मात्र ताम्र पात्र को लुढ़काने से उत्पन्न ध्वनि पर कालिदास ने इन्द्रवज्रा छंद में श्लोक रच डाला।

आज हम एक दो उदाहरण समस्या पूर्ति के और देखते हैं ताकि यह समझ सकें की यह विधा है केवल तुक्का नहीं।

यह समस्या पूर्ति भी कालिदास से संबंधित है। राजा भोज भी काव्य प्रेमी थे, उन्होंने एक पद्यांश दिया—

''मृगात् सिंहः पलायते'' और कहा यह चतुर्थ चरण है बाकी तीन चरणों में इस समस्या की पूर्ति करो। वह कवि कालिदास जी के पास गया। कालिदास जी ने यह श्लोक बना कर दिया—

कस्तुरी जायते कस्मात् ? को हन्ति करिणां कुलम् ?
किं कुर्यात् कातरो युद्धे ? मृगात् सिंहः पलायते।।

अर्थ :- कस्तूरी किससे उत्पन्न होती है ? मृग से। (मृगात्)
कौन हाथियों के समूह को मार देता है ? सिंह। (सिंहः)
कमजोर व्यक्ति युद्ध में क्या करे ? भाग जाए। (पलायते)
यहाँ चतुर्थ पद में अगले तीनों पहेलियों के जवाब प्रेषित है।

अर्थात् हिरण की नाभि से कस्तूरी नाम का सुगन्धित द्रव्य प्राप्त होता है, सिंह हाथियों का संहार करता है और कायर व्यक्ति युद्ध से पलायन (भाग जाना) करता है।

राजा भोज अति प्रसन्न हुए और धन-धान्य से उस कवि को भी खुश किया। यह चतुर्थ चरण जब दूसरे कवि को दिया गया तो उसने भी श्लोक बनाया, जबकि उस चतुर्थ अंश का कोई अर्थ नहीं निकलता पर भाषा की समृद्धता तो तभी है जब असंभव को संभव कर दे।

उसने जो श्लोक बनाया वह था;

तिष्ठार्जुनाद्य संग्रामे त्वां हनिष्याम्यहं शरैः।
तिष्ठामि कर्ण किं मूढ़ मृगात सिंहः पलायते॥

अर्थ :- कर्ण कहता है-ओ अर्जुन तुम वहीं खड़े रहो। इस युद्ध में मैं तुझे अपने बाणों से मारूँगा। अर्जुन जवाब देता है-ओ मूर्ख कर्ण! देखो, मैं यहीं खड़ा हूँ। क्या कभी सिंह मृग को देखकर भागता है।

यह भी अद्भुत श्लोक रचा कवि ने। इस श्लोक को भी खूब सराहा और इस कवि को भी प्रसन्न कर विदा किया।

ऐसे चमत्कारों से भरी संस्कृत की अगली शृंखला में दो और समस्या श्लोकों की चर्चा करेंगे, तब तक के लिए नमस्कार!

❍❍❍

—सुरेश चौधरी
19 अप्रैल, 2020

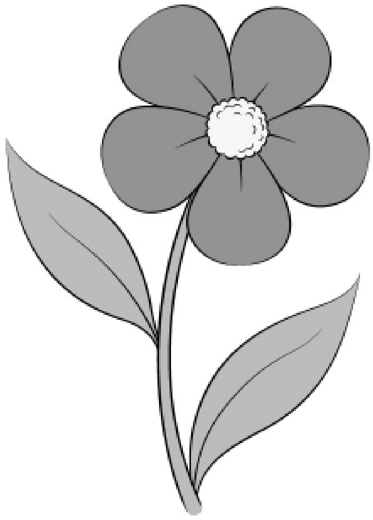

भाग-25

पिछली शृंखला में हमने देखा कैसे अनर्गल शब्द देकर श्लोक का एक चरण बनाया जाता है। उसी चरण के छंद को पकड़ कर बाकी के तीन चरण बनाये जाते हैं, जो उस श्लोकांश से मेल खाते हुए सार्थक अर्थ निकालते तो हैं ही, साथ ही छंद विन्यास भी बनाये रखते हैं।

आज संस्कृत के दूसरे चमत्कार को देखें यह भी समस्या पूर्ति में है। श्लोक को पढ़िए-प्रथम दृष्टा श्लोक का कोई अर्थ नहीं निकलता, पर जब यह श्लोक किसी विद्वान को दिया जाय तो वह पत्थर से भी पानी निकाल दे।

हनुमति हतारामे वानरा हर्ष निर्भराः
रूदंति राक्षसाः सर्वे हा हारामो हतो हतः ।।

सामान्य पठन में इसका अर्थ निकलता है-'जब हनुमान ने राम का वध कर दिया, तब वानर खुशी से उछलने लगे और राक्षस रोने लगे।'

ज्ञानी आचार्यों ने इसका जो सही अर्थ निकाला, वह है—

जब रावण का बाग हनुमान द्वारा उजाड़ा गया तब वानर खुशी से उछलने लगे एवं राक्षस यह कह कर रोने लगे कि बगीचा उजड़ गया, बगीचा उजड़ गया।

ज़्या इसे हम द्विअर्थी संवाद कह सकते हैं?

अगली कड़ी में संस्कृत की कुछ चमत्कृत कर देने वाली पहेलियां देखेंगे।

तब तक के लिए नमन।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

25 अप्रैल, 2020

भाग-26

समस्या पूर्ति, इसे पहेली भी कह सकते हैं। कई जगह बुझ्झवल भी कहते हैं। लोक पहेली रूपी समस्या पूर्ति में शब्द का चमत्कार कम होता है, ज्ञान या बुद्धि कह लीजिये उसका ज्यादा, जैसे ''हरी थी मन भरी थी राजाजी के बाग में दुशाला ओढ़े खड़ी थी।'' यहां पहेली बुझाने के लिए बुद्धि का प्रयोग होगा पर संस्कृत की समस्या पूर्ति पहेली नहीं है,भाषाई चमत्कार है। एक वाक्यांश से भाषा का चमत्कार देख कर उन शब्दों का विन्यास करना पड़ता है। यह हमने पिछली दो-तीन श्रृंखला में देखा।

मुझे आज एक बचपन की बात याद आ रही है। मैं शायद 9 वर्ष का रहा होगा। कक्षा 6 का छात्र था। हमारे विद्यालय में हर बृहस्पतिवार को बाल सभा लगती थी, उसमें सभी बच्चे कुछ न कुछ प्रदर्शन करते थे। कोई गीत-गाना गाता, कोई पहेलियां पूछता, कभी-कभी बाल नाटक होते इत्यादि, इत्यादि।

हमारे घर में भोजन बनाने के लिये महाराज जी थे। हमलोग रसोइए को महाराज ही बोलते थे, क्योंकि उन दिनों ब्राह्मण कुक ही रखे जाते थे। उन्हें संस्कृत का भी अच्छा ज्ञान था। वे बच्चों से कुछ न कुछ पूछते रहते और बताते रहते। उन्होंने ही यह पहेली सिखाई थी, पता नहीं संस्कृत तो विकृत थी, यह आज समझता हूँ। पहेली इस दोहे में थी।

''अजा सहेली तात रिपु, ता जननी भरतार
ताते सुत के मित्र को, जपिये बारम्बार।''

मैंने भी यह पहेली पूछ डाली। शिक्षिका जो थीं, वे मुझे प्राचार्य जी के पास ले गयीं। प्राचार्य जी ने मुझसे पूछा-तुम्हें किसने सिखाई। मैं एक बार तो डर गया, कहीं कोई गलत बात तो नहीं कर दी। मैं आर्य समाज स्कूल में पढ़ता था, अत: वहां भारतीय संस्कृति और संस्कृत भाषा का बहुत ध्यान

दिया जाता था। प्राचार्य जी खुश हुए तथा बोले–आज तक इतने छोटे बच्चे के मुख से ऐसी पहेली नहीं सुनी।

कहने का अर्थ है संस्कृत भाषा के सौष्ठव से सिक्त पहेलियां या सूक्त बाल्यकाल से ही संस्कार में भरे जाते थे। गायत्री मंत्र स–अर्थ प्रत्येक दिन प्रार्थना में पढ़ी जाती।

अब उपरोक्त पहेली पर आएं :

अजा बकरी को कहते हैं, उसकी सहेली भेड़ें हुईं। उनके दुश्मन जंगली झाड़ियां जिनके कांटों में भेड़ों के बाल फंस जाते हैं और वे कष्ट पाती हैं। उसकी जननी पृथ्वी क्योंकर ये जमीन पर स्वत: यह जाती है। शास्त्रों में पृथ्वी को इंद्र की पत्नी कहा गया है और यह भी कहा गया है कि अर्जुन इंद्र के पुत्र थे। अर्जुन के मित्र कृष्ण थे, अत: पहेली का उत्तर है कृष्ण को बारम्बार जपिये।

यह कोई चमत्कार है कि नहीं पता नहीं पर मुझे ठीक लगा तो लिख दिया। अगली कड़ी में पुस्तकों में लिखे चमत्कारों पर पुन: आऊंगा नई समस्या पूर्ति के साथ।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

27 अप्रैल, 2020

भाग-27

करीब सप्ताह भर इस श्रृंखला की अगली कड़ी को नहीं लिख सका। पिछली श्रृंखला में हम समस्या पूर्ति के बारे में पढ़ रहे थे, जिसमें मैंने अपने बचपन के एक संस्मरण को बताया था। आज चलिए एक श्लोक पढ़ें, फिर इसके बारे में चर्चा करेंगे—

कृष्ण-मुखी न मार्जारी द्वि-जिह्वा न च सर्पिणी।
पञ्च-भर्ता न पाञ्चाली यः जानाति सः पण्डितः॥

इसका अर्थ है—

यह श्याम रंग की है पर बिल्ली नहीं, इसकी दो जिह्वा हैं पर सांप नहीं, इसके पांच पति हैं पर द्रौपदी नहीं, बताईये कौन है, जो बताएंगे समझेंगे वे बहुत ज्ञानी हैं।

सामान्यत: पहेलियों में किसी चीज के एक प्रकार के बिम्ब दिए जाते हैं पर पुरानी संस्कृत पहेलियों में जिसे प्रहेलिका कहते हैं, में तीन-चार विकल्प देकर भ्रमित किया जाता था, जैसे उपरोक्त प्रहेलिका में है।

उत्तर :- लेखनी यहां पांच पति का संबंध पाँच अंगुलियों से है। कलम के मुख पर चीर कर दो भाग किये रहते हैं, जैसे सर्प की जिह्वा से दर्शाया गया है और रंग का अर्थ स्याही से है।

एक दूसरी प्रहेलिका और देखते हैं,

वृक्षाग्रवासी न च पक्षिराजः
त्रिनेत्रधारी न च शूलपाणिः।
त्वग्वस्त्रधारी न च सिद्धयोगी
जलञ्च बिभ्रन्न घटो न मेघः॥

अर्थ :- पेड़ बहुत ऊंचे रहते हैं पर पक्षीराज गरुड़ नहीं, तीन आंखें हैं पर शंकर नहीं हैं, बलकल जटाजूट के वस्त्र धारण करते हैं पर सिद्ध योगी

नहीं, जल से भरे हैं पर न तो कलश हैं न मेघ, बताईये क्या है।

उत्तर लिखते ही पता चल जाएगा की संस्कृत की प्रहेलिकाएँ वास्तव में बहुत मस्तिष्क का विलोडन करती थी। उत्तर है नारियल।

अगली कड़ी में संस्कृत भाषा के अन्य चमत्कार के बारे में बताऊंगा।

तब तक के लिए आज्ञा।

(स्रोत : पुस्तक संस्कृत क्रीड़ा)

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

4 मई, 2020

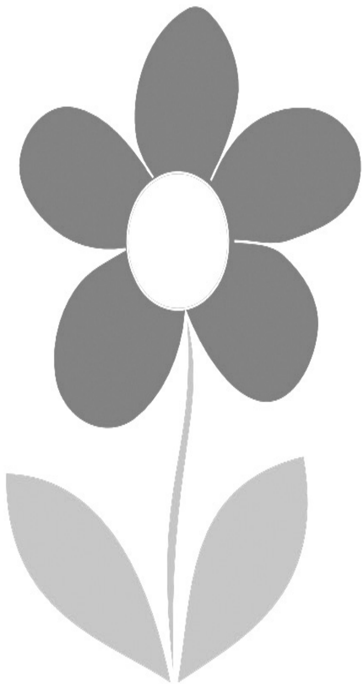

भाग-28

कल हमने प्रहेलिका के एक रूप को देखा। आज भाषाई चमत्कार से प्रहेलिका के दूसरे रूप को देखते हैं। एक आचार्य एक श्लोक पढ़ता है और दूसरे आचार्य से अर्थ बताने को कहता है। जब हम श्लोक पढ़ेंगे तो अर्थ बहुत सरल लगेगा। उदाहरणत: एक श्लोक देखिए—

केशवं पतितं दृष्ट्वा
पाण्डवा हर्षनिर्भराः।
रुदन्ति कौरवास्सर्वे
हा हा केशव केशव॥

अर्थ :- केशव को गिरा देख कर, पांडव खुशी से हंसने लगे और कौरव रो रो कर चिल्लाने लगे, हा केशव! हा केशव!

इस अर्थ को देख कर लगता है कवि ने अवश्य गलती की है। केशव को गिरता देख पांडव क्यों हर्षित होंगे, कौरव क्यों रोयेंगे। अवश्य कौरव की जगह पांडव और पांडव की जगह कौरव लिखा गया है। पर चक्कर देखिए—

दूसरे आचार्य ने सोचा की अर्थ इतना सरल होता तो यह प्रहेलिका क्यों पूछते। अवश्य कोई गूढ़ अर्थ लिए हैं, बिल्कुल चकरा देने वाला।

तो वह चकरा देने वाला अर्थ देखिए—

केशव, के-शव, यहाँ

'क' वर्णमाला के साथ सातवें वर्ण का अक्षर के हुआ और बारह खड़ी में 'के' का सातवां अक्षर है कं, यह अर्थ जल को बिम्बित करता है।

शव का अर्थ मृत व्यक्ति की मृत देह

पा का अर्थ जल

अंडवा माने अंडे से जन्म लेने वाला

यहां अर्थ हुआ मछली पानी के अंदर अंडे से जन्म लेती है।

कौरव के अर्थ को विच्छेद करके देखिए—

कौ, अर्थ भयंकर

रव का अर्थ हुआ आवाज, लोमड़ी की आवाज

मतलब भयंकर नाद या आवाज

अब श्लोक का अर्थ देखिए—

शव को जल के अंदर गिरा देख मछलियां हर्ष से प्रफुल्लित हो गयी कि उनको उनका भोजन मिल गया। वहीं लोमड़ी ने उसे जल में गिरते देख जोर-जोर से चिल्लाना शुरू किया-शव जल में गिर गया, अब उन्हें यह खाने, चबाने को कुछ नहीं मिलेगा।

है न गजब का भाषाई चमत्कार। धन्य देववाणी संस्कृत। अगर आपको अच्छी लगे तो प्रतिक्रिया अवश्य दीजियेगा। आपकी टिप्पणी मुझे प्रोत्साहित करेगी।

कल फिर हम एक और भाषाई चमत्कार देखेंगे।

स्रोत : पुस्तक संस्कृत क्रीड़ा

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

5 मई, 2020

भाग-29

पिछली शृंखला में हमने संस्कृत भाषा के संधि विच्छेद से उत्पन्न चमत्कार को देखा था। इस बार समास विभक्ति से उत्पन्न चमत्कार को देखेंगे। सचमुच इस बार का लेख पढ़कर आप कह उठेंगे-साधु साधु। यह केवल संस्कृत में ही संभव है।

नन्दामि मेघान् गगनेऽवलोक्य नृत्यामि गायामि भवामि तुष्टः।
नाहं कृषिज्ञः पथिकोऽपि नाहं वदन्तु विज्ञा मम नामधेयम्॥

सामान्य अर्थ :-

मैं आकाश में बादलों को देख कर खुश होता हूँ, मैं नाचता हूँ, मैं गाता हूँ, परन्तु मैं किसान नहीं हूँ, न ही मैं कोई यायावर हूँ, मैं कौन हूँ, जरा बतलाओ तो?

एक किसान आकाश में बादलों को देख प्रसन्न होता है। वह बादलों को देख नाच भी सकता है, गा भी सकता है। एक यात्री प्रचंड गर्मी में यह सब देखकर वैसी ही प्रतिक्रिया देगा, जैसी ऊपर बताई गयी है। प्रहेलिका का हल दोनों में से कोई नहीं है।

इसका एक और उत्तर हो सकता है, वह है-मयूर या नीलकंठ।

एक मोर जब बादल देखता है तब अपनी प्रसन्नता नाच कर, गा कर जाहिर करता है। ऐसा लगने लगता है कि वह खुशी से भर गया है, अतः इसका उत्तर न किसान है न यात्री।

एक दूसरी प्रहेलिका और देखते हैं—

अहं च त्वं च राजेन्द्र लोकनाथावुभावपि।
बहुव्रीहिरहं राजन् षष्ठीतत्पुरुषो भवान्॥

इसका सामान्य अर्थ है—

एक भिखारी कहता है-ओ राजन! मई और तुम दोनों लोकनाथ हैं। मैं

तो चावल के भण्डार वाला धनि व्यक्ति हूँ और तुम केवल छठे व्यक्ति हो।

यह कैसे हो सकता है कि एक राजा जो की सामान्यत: लोकनाथ होता है। लोकनाथ का अर्थ हुआ पालने वाला, अभिभावक। पत्रं शक्तिवान। पर भिखारी कहता है उसे छठा व्यक्ति मतलब तिरष्कृत व्यक्ति है और एक भिखारी धनी व्यक्ति (बहुव्रीहि अर्थ बहुत सारे चावल) है। आईये श्लोक के रहस्य को डिकोड करें—यह केवल संस्कृत भाषा में ही संभव है। लोकनाथ को दो भाग में बांटे, दो अलग समास में, अब समस अंग्रेजी या किसी एनी भाषा में नहीं होते, अत: समस ही समझिएगा समोसा नहीं?

षष्ठी सत्पुरुष समस में विगठित करने से हुआ—

लोकस्य नाथ : दुनिया का मालिक, पर एक भिखारी दुनिया का मालिक कैसे होगा? अगर इसे बहुव्रीह समस में विभक्त करते हैं तो बनता है—

लोक: नाथ: यस्य स: इसका अर्थ हुआ—वह जिसका मालिक यह संसार है, मतलब भिखारी इस विश्व की विराटता को स्वीकार करता है। पूरा संसार उससे ऊपर है, क्योंकि वे जीवित है तो केवल संसार की दया के कारण।

बहुव्रीहि शब्द का अर्थ है-जिसके पास बहुत सा चावल या अनाज हो। ठीक यह भी षष्ठीतत्पुरुष समास में विभक्त करे तो समास का छठा स्थान आता है। इस प्रकार श्लोक का दूसरा अर्थ होगा,

ओ राजन! मई और आप लोकनाथ हैं। मैं बहुव्रीहि समास के अनुसार संसार के आश्रय हूँ। आप षष्ठी समास के अनुसार विश्व के पालन कर्ता हो।

हाँ : वह भिखारी जरूर समास के व्याकरण का अद्भुत जानकार था अन्यथा ऐसी चमत्कृत करने वाली संस्कृत से राजा को कसे खुश करता।

अगली कड़ी में कुछ और प्रहेलिका को देखेंगे, तत्पश्चात हम दृष्टिकूट विधा को जानेंगे, जो कि सिर्फ और सिर्फ संस्कृत के आचार्यों द्वारा ही संभव है। तब तक के लिए नमन। ○○○

—सुरेश चौधरी

7 मई, 2020

भाग-30

प्रहेलिका को छोड़ बीच में एक बार फिर संस्कृत भाषा के उस चमत्कार पर चलते हैं जो भाषाई सौष्ठव को दर्शाती है।

पुन: मैं भक्तिकालीन या रीतिकालीन आचार्यों की रचना को न दर्शाते हुए जगतगुरु श्रीरामभद्राचार्य जी की अनुपम कृति से 2 श्लोक उधृत कर रहा हूँ।

श्रीभार्गवराघवीयम् के सातवें सर्ग में अचलधृति (गीत्यार्या) छंद में रचित सात पद्य (7.11-7.17) हैं, जिनमें केवल संस्कृत के लघु अक्षरों का प्रयोग किया गया है। कवि टिप्पणी करते हैं कि परशुराम विनम्रता एवं संकोच का अनुभव करते हुए चित्रकूट के वनों की प्रशंसा केवल लघु अक्षरों में करते हैं। यहाँ दो उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

त्रिजगदवन हतहरिजननिधुवन
निजवनरुचिजितशतशतविधुवन।
तरुवरविभवविनतसुरवरवन
जयति विरतिघन इव रघुवरवन॥
मदनमथन सुखसदन विधुवदन-
गदितविमलवरविरुद कलिकदन।
शमदमनियममहित मुनिजनधन
लससि विबुधमणिरिव हरिपरिजन॥

"हे त्रिलोक के रक्षक! हरिभक्तों के नश्वर सुखों का हरण करने वाले, अपनी जलराशि की शोभा से सहस्रों चंद्रमाओं की दीप्ति को जीतने वाले, अपने तरुवरों के वैभव से देवताओं के नन्दन वन को भी विनत करने वाले एवं रघु के वंशजों में सर्वश्रेष्ठ भगवान श्रीराम के प्रिय चित्रकूट वन! आप वैराग्य के गहन कोष के सदृश विराजित हो रहे हैं। ॥ 7.11॥"

''हे काम का मर्दन करने वाले भगवान शिव के सुख धाम। चन्द्रमा के समान मुख वाले भगवान श्रीराम द्वारा स्वयं जिनकी विमल एवं श्रेष्ठ विरुदावलियों का गान किया गया है। कलि के दुर्गुणों का भंजन करने वाले, शम, दम एवं नियम जैसे गुणों से मण्डित, मुनिजनों के लिए संपत्ति स्वरूप, भगवान श्रीराम के प्रिय परिजन चित्रकूट! आप देवताओं की चिन्तामणि के सदृश दीप्तिमान हो रहे हैं।॥ 7.12 ॥''

बिना किसी मात्रा के एक वाक्य लिखना दुरह कार्य है। बचपन में पाठशाला जाने के क्रम में 'कमल घर चल' इत्यादि पढ़ाया जाता था, परंतु पूरे श्लोक को लिखना निश्चय ही भाषा की संपन्नता का द्योतक है और धन्य है ये आचार्य जिन्होंने ऐसी अनुपम कृति लिखी।

प्रस्तुत श्लोक अचल धृति छंद में है जिसके एक चरण में पांच नगण आते हैं और एक लघु, अतः इसे लघुक्षरी भी कहा गया है।

सुन रघुवर वचन प्रमुदित सदन
सिय नयन गहर गहर सिहर मन
निहर निहर पद कमल पुलक तन
रघुवर सिय युगल छविअचल धन

यह छंद भी आज की कवियत्री डॉ. सुशीला शर्मा का है। कहने का तात्पर्य यह है कि भाषा में सामर्थ्य न हो तो ऐसे चमत्कारी छंद नहीं रचे जा सकते। मुझे अंग्रेजी में सिंगल सोनेट की कोई कविता नहीं मिली।

अभी कुछ विलंब से शृंखला लिख पा रहा हूँ, उसके लिए क्षमाप्राथी हूँ। एक तो मन का केंद्रित न होना, दूसरे स्वास्थ्य की असहजता दोनों कारण हैं। ❍❍❍

—सुरेश चौधरी

14 मई, 2020

भाग-31

हमने भाषाई चमत्कार से रची एकाक्षरी देखी, द्वयक्षरी देखी, लघुक्षरी देखी, प्रहेलिकाएँ देखी, आज एक अन्य चमत्कार बतलाता हूँ। संस्कृत में दो व्यक्तियों के वार्तालाप को ऐसे दर्शाया गया है कि वे पूछ कुछ रहे हैं और जबाब कुछ और मिल रहा है। परंतु पूछने वाला भी जानता है कि क्या पूछ रहा है और उत्तर देने वाला भी।

ऐसे श्लोकों को संस्कृत में ॥ उक्ति प्रत्युक्तिस्तोत्रम् ॥

कहते हैं वादिराजयती ने ऐसे कुछ स्त्रोत लिखे हैं। मैं जिन्हें उधृत कर रहा हूँ, वे लीलासुख द्वारा रचित श्रीकृष्णलीलासुखामृतं के हैं। कवि श्रीकृष्ण की लीला को दर्शन चाहते हैं, उसमें गोपी और कृष्ण की वार्ता का दृश्य है जिसे बाद में वह गोपी यशोदा को बताती है। लीजिये आप भी आनंद लीजिये—

वह गोपी यशोदा से बोली–कृष्णजननी! सुनो, परसों की बात है। नीलमणि मेरे घर गया। जाकर इसने नवनीतभाण्ड में हाथ डाल दिया। मैं दूर से बोली–'रे शिशु! तू कौन है?' वह बोला–'री मैं बलराम का छोटा भाई हूँ।' (यहां बलराम का भी बोलने का अर्थ अपनी रेपुटेशन बताना है, क्योंकि कृष्ण की रेपुटेशन बहुत खराब थी पर बलराम की अच्छी थी) मैंने पूछा–'फिर यहाँ क्यों आया है?' इस पर इसने अविलंब उत्तर दिया–'मैं तो अपना घर समझकर आ गया।' (यहां गोपियों को कृष्ण समझाना चाहते हैं कि संपूर्ण ब्रजधार उसका अपना घर ही है) मैं हँसकर बोली–'ठीक है, भ्रम होना तो संभव है; पर तुमने नवनीत के मटके में हाथ क्यों डाला?' इस पर इसने बड़ी गंभीर मुद्रा में कहा–'गोपी मैया! देख; मेरा एक गोवत्स खो गया था, उसे ही मैं ढूँढ़ रहा था। (बाल सुलभ बातों में ही कृष्ण बछड़ों के महत्व को समझाना चाहते हैं कि यह जो मक्खन है, वह इन बछड़ों के हिस्से

का है, अतः बिम्ब में बता रहे हैं कि बछड़ा इन माखन में गुम हो गया है) तू क्षण भर के लिये भी चिन्तन या दुःख मत कर कि मैं तेरा माखन खाने आया हूँ।' फिर इसने माखन से सने एक स्फटिक निर्मित गोवत्स को (खिलौने को) मुझे दिखाया और बोला–'माता! मिल गया! अब मैं जाता हूँ। (यह कह कर कृष्ण जताना चाहते हैं कि तू समझ गयो, मैं क्या कहना चाहता था) बाबा ने मधुवन से लाकर इस गोवत्स को मुझे दिया था। यह प्रायः मेरे हाथ से–जहाँ कहीं भी नवनीत भाण्ड इसने देखा कि उसी में कूद पड़ता है; फिर इसे निकालने में बड़ी कठिनता होती है।'

गोपी कहती है–यह कहकर वह तो चला गया और मैं हँसी में इसे पकड़ना भूल गयी—

कस्त्वं बाल बलानुजः किमिह रे मन्मन्दिशंकयायुक्तं
तन्नवनीतपात्रविवरे हस्तं किमर्थे न्यसेः।
मातः कंचन वत्सकं मृगयितुं मा गा विषादं क्षणा-दित्येवं
वरवल्लवीप्रतिवचः कृष्णस्य पुष्णातु नः।।

इस तरह वार्ता–वार्ता में कवि गहन बातें बता देते हैं। वह कहावत है न कि कहीं पर निगाहें कहीं पर निशाना, बिल्कुल इसे चरितार्थ करते हुए।

अगर आपको उक्ति प्रतिउक्ति अच्छी लगी हो तो बताईयेगा। अगली शृंखला में एक दो और देखेंगे।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी
15 मई, 2020

भाग-32

कल की शृंखला में हमने देखा की उक्ति प्रत्युक्ति में श्रीकृष्णलीलामृतम् का श्लोक, यह श्लोक लेकर तीन श्लोकों से श्री वादिराजयती ने एक लघु काव्य रचा, उसका नाम ही उक्तिर्प्युक्ती रखा। इसमें दो श्लोक में गोपी और कृष्ण की वार्ता तथा एक में अन्य वार्ता को बताया गया है। हमने पहली वार्ता को कल पढ़ा और अर्थ समझा। आज दूसरी वार्ता को देखें और संस्कृत के शब्दों का चमत्कार देखें कि एक ही बात उत्तर भी है और दूसरा सन्देश भी देती है। गोपियाँ कृष्ण के साथ परिहास करती हैं और उत्तर के दूसरे अर्थ से बाल कृष्ण की चुटकी लेती हैं।

श्लोक है—

श्रीवादिराजयति कृतम्।

अङ्गुल्या कः कवाटं प्रहरति? कुटिले! माधवः, किं वसन्तो?
नो चक्री, किं कुलालो? नहि धरणीधरः, किं द्विजिह्वः फणीन्द्रः?
नाहं घोराहिमर्दी, खगपतिरसि किं? नो हरिः, किं
कपीन्द्रस्त्वित्येवं गोपकन्या-प्रतिवचनजडः पातु मां पद्मनाभः॥ 1॥

गोपी : अङ्गुल्या = अँगुलियों से, कः कवाटं प्रहरति? = कौन द्वार खटखटा रहा है?

कृष्ण : कुटिले = ओ कुटिल! मैं माधवः (माधव का दूसरा अर्थ बसंत ऋतु भी होता है)

गोपी : किं वसन्तः ? = क्या बसंत? बसंत ऋतु आ गयी क्या?

कृष्ण : नो, चक्री = नहीं मैं चक्रधारी (संस्कृत में चक्री कुम्हार को भी कहते हैं, क्योंकि वह भी पहिये, चक्र को धारण करता है।

गोपी : किं कुलाल: ? = की तुम कुम्हार हो ?

कृष्ण : नहि, धरणीधर: = नहीं मैं धरनीधर हूँ, क्योंकि कृष्ण ही तो पूरी पृथ्वी के धारक हैं।

गोपी : किं द्विजिह्वा फणीन्द्र: ? = क्या तुम नागराज शेष हो (पृथ्वी को शेष के सर पर टिका कहा जाता है)

कृष्ण : नाहं, घोराहिमर्दी = नहीं, मैं वह नहीं हूँ बल्कि वह हूँ जिसने सांप के सर पर चढ़कर उसे नियंत्रण में किया था (कथा है कालिया मर्दन कर उसके सर पर नृत्य किया था)

गोपी : खगपतिरसि किं = तब तो तुम पक्के गरुड़ हो, (गरुड़ सर्पों का दुश्मन है, उन्हें पकड़ कर खा जाते हैं)

कृष्ण : नो, हरि: नहीं मैं हरी हूँ।

गोपी : किं कपीन्द्र: अस्ति ? तो क्या तुम बंदरों के राजा हो; हरी बंदर को भी कहा जाता है।

इति एवं = इस प्रकार पद्मनाभ: = भगवान् पद्मनाभ, गोपकन्या प्रतिवचनजड: मां पातु = जो कि गोपियों के इतने चतुर नहीं है और उनको उत्तर नहीं दे पाए, उनकी रक्षा करो।

संपूर्ण वार्ता से पता चलता है कि कवि भाषा की समृद्धता से कई सन्देश दे रहा है। एक तो गोपियों के उज़्र, दूसरे उनके परिहास के द्वारा कृष्ण लीला को दर्शाना, तीसरा यह बताना कि प्रभु सब जानते हुए भी गोपियों के प्रेम में जानबूझ कर बुद्धू बने हुए हैं ताकि यह अद्वेत लीला चलती रहे।

अन्य जगह मैंने पढ़ा है, यह संवाद कृष्ण और सत्यभामा के मध्य बताया गया है। एक बार सत्यभामा रूठ कर कोप भवन में जा बैठी तब कृष्ण उन्हें मनाने गए तब चिढ़ी हुई सत्यभामा कृष्ण के प्रत्येक उत्तर

को दूसरे अर्थ में ले गयी। इस प्रकार कृष्ण सत्यभामा के सामने बेबस हुए। वार्ता को देखते हुए यह ज्यादा उचित लगता है, वादिराज के तीन छन्दों में।

कैसी लगी यह शृंखला। अगर अच्छी लगी तो कम से कम दो उक्ति प्रत्युक्ति और प्रस्तुत करने का विचार है। नमन।

◆◆◆

(यह शृंखला लिख तो 19 को ही ली थी, पर पोस्ट आज 2 जून को कर पा रहा हूँ। विलंब के लिए क्षमा चाहता हूँ।)

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

19 मई, 2020

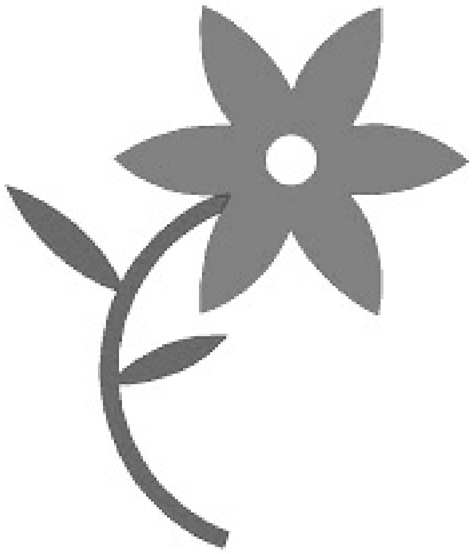

भाग-33

कुछ श्रृंखलाओं में हमने वार्ता और उसमें छिपे रहस्य को कैसे भाषा की समृद्धता उजागर करती है देखा। हम एक दो उदाहरण वैसे ही श्लोकों के देखेंगे, तत्पश्चात द्रिष्टिकूट के बारे में जानेंगे जो कि आपको अचंभित कर देगी।

आईये आज दो श्लोकों को देखें जो सचमुच अद्भुत हैं। इनकी व्याख्या करेंगे तभी हम इसके महत्व को समझेंगे अन्यथा यह साधारण सा श्लोक लगेगा। श्लोक है—

स्वयं पञ्चमुखः पुत्रौ गजाननषडाननौ।
दिगम्बरः कथं जीवेत् अन्नपूर्णा न चेद्गृहे॥

श्लोक का अर्थ देखें-खुद पंचानन है, बेटे गजानन और षडानन हैं, भगवन कैसे जियें अगर अन्नपूर्णा घर में न हो तो?

पढ़ने से कोई खास बात नहीं लगती, पर कवि ने श्लोक को व्यंग्यात्मक तरीके से कहा है। इसमें कवि ने घर में माता की भूमिका को महत्व प्रदान करती है और बताती है कि माँ क्या प्रतीक है।

भगवान शिव के 5 मुख हैं। उनके 2 बेटों में से एक गणेश के मुख का आकार हाथी का है और दूसरे कार्तिकेय के 6 मुख हैं! जरा कल्पना कीजिए कि एक पिता इतने सारे मुख को खाना खिला रहा है! कवि कहता है-यह एक पिता के लिए संभव नहीं है, भले ही वह भगवान हो! एक माँ की भूमिका ही यहाँ काम आती है। वह 'एक और केवल' वही है और इसलिए अपूरणीय है!! वह अपनी पसंद और नापसंद को एक तरफ रख अपने परिवार को दिन-रात बिना थके सर्वोच्च प्राथमिकता देती है। चाहे उसे कोई श्रेय मिले या नहीं। वह अपने कर्तव्यों को लगातार पालन करती है। उसे पारिश्रमिक में केवल यह कमाना रहती है कि उसका परिवार प्रसन्न

रहे। माँ की तुलना किसी भी शब्दों से नहीं की जा सकती। उसका कोई जोड़ नहीं घर को घर रखने में।

माँ बच्चों का हाथ चाहे थोड़े समय ही थामे रहती हो पर उनके दिल में सदा बसती है।

पुनश्चः हमारी संस्कृति शिव को ईशान (पंच वक्त्र त्रिनेत्र) स्वरूप मानती है। मतलब शिव में तत्पुरुष, वामदेव, अघोर, सद्योज्त और ईशान का निवास है, ये पञ्चभूत (जल, गगन, अग्नि, वायु, आकाश) के प्रतीक भी हैं।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

6 जून, 2020

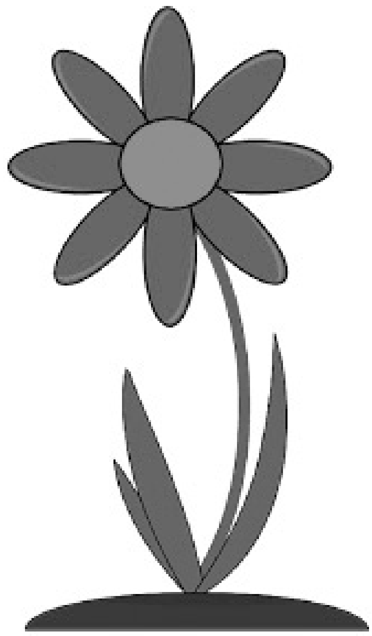

भाग-34

पिछले तीन-चार कड़ी में हमने देखा कि संस्कृत भाषा के शब्दों के चमत्कार के द्वारा विभिन्न वार्ताओं में गूढ़ता छिपी हुई होती है। आज इस गूढ़ता की अंतिम कड़ी में दो श्लोक उधृत करूँगा। फिर अगली कड़ी में कुछ संस्कृत के शब्द सामर्थ्य की बात तत्पश्चात दृश्य कूट के बारे में चर्चा करेंगे। दृश्य कूट भी एक विचित्र विधा है, जिसमें शब्द कहीं और अर्थ कहीं जाते हैं, मतलब वह फिल्मी गाना है न-कहीं पर निगाहें कहीं पर निशाना।

आईये आज के श्लोक को पढ़ते हैं—

जनश्रुति है कि राजा भोज ने एक लकड़हारे के सिर पर बोझ देखकर परादु:खकातर हो उससे संस्कृत में पूछा कि तुम्हें यह बोझ कष्ट तो नहीं पहुंचा रहा है और 'बाधति' क्रिया का प्रयोग किया। इस पर लकड़हारे ने उत्तर दिया—

महाराज! मुझे इस बोझ से उतना कष्ट नहीं हो रहा है जितना 'बाधते' के स्थान पर आपके बोले हुए 'बाधति' पद से हो रहा है। इसी प्रकार से उस जुलाहे की बात हम कभी नहीं भूल सकते, जिसने संस्कृत में अपना परिचय देते समय कहा था—

''काव्यं करोमि नहि चारुतरं करोमि।
यत्नात् करोमि यदि चारुतरं करोमि।
भूपाल - मौलिमणि - मण्डित पाद पीठ।
हे साहसाकं! कवयामि वयामि यामि॥''

(मैं काव्य लिखता हूँ पर बहुत अच्छी तरह नहीं लिख पता। अगर प्रयत्न करूँ तो इसे सुधार सकता हूँ। हे राजन (भोज) ! जिसके पैर जवाहरात से मंडित सिंहासन पर हैं-मैं कविता भी करता हूँ, बुनुता भी हूँ और आपके आदेश से गा भी सकता हूँ। इसमें काव्यामी, वयामी, यामी में अनुप्रास देखते

ही बनता है, जो पूरी कविता का अर्थ ही बदल देता है।)

अंततः कहा जा सकता है कि जिस भाषा को रथ हाँकने वाला, लकड़ी का बोझा उठाने वाला (लकड़हारा)और कपड़ा बुनने वाला (जुलाहा) समझे और बोले उसे बोलचाल की भाषा न कहना महान् अपराध ही है।

आजकल कुछ बुद्धिजीवी यह सिद्ध करने में लगे रहते हैं कि संस्कृत कभी भी आम बोलचाल की भाषा नहीं रही और इसीलिए यह लुप्त हो गयी। उपरोक्त श्लोक निःसंदेह यह सिद्ध करता है कि उस युग में गड़ेरिये, जुलाहे, सभी शुद्ध संस्कृत का वाचन करते थे और यहाँ तक राजा की अशुद्धि से भी आहत होते थे और उसे इंगित कर देते थे।

बुनकर और कविता के प्रगाढ़ संबंध की बातें मंदसौर के लेख में भी मिलती है। (प्रसंग भोज प्रबंध 198) से लिया गया है।

जब भोज जीवित थे तो कहा जाता था—

अद्य धारा सदाधारा सदालम्बा सरस्वती।
पण्डिता मण्डिताः सर्वे भोजराजे भुवि स्थिते॥

(आज जब भोजराज धरती पर स्थित हैं तो धारा नगरी सदाधारा (अच्छे आधार वाली) है; सरस्वती को सदा आलम्ब मिला हुआ है; सभी पण्डित आदृत हैं।)

जब उनका देहान्त हुआ तो कहा गया –

अद्य धारा निराधारा निरालम्बा सरस्वती।
पण्डिताः खण्डिताः सर्वे भोजराजे दिवं गते॥

(आज भोजराज के दिवंगत हो जाने से धारानगरी निराधार हो गयी है; सरस्वती बिना आलम्ब की हो गयी हैं और सभी पंडित खंडित हैं।)

तिलक मंजरी...

उपरोक्त के लिए यह भी किंवदंती है कि एक बार दरबार में कालिदास नहीं थे तब किसी ने कह दिया की अगर कोई अभी कालिदास को सूचना दे की राजा भोज नहीं रहे तो वे क्या कहेंगे। एक दरबारी को कालिदास के घर भेजा गया, जैसे उसने कालिदास को कहा कि राजा भोज नहीं रहे तो यह श्लोक अकस्मात् उनके मुंह से निकल पड़ा।

नमस्कार।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

10 जून, 2020

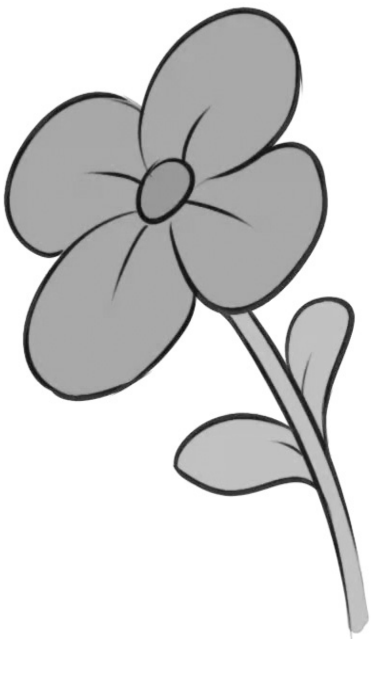

भाग-35

सोचा था रहस्यभरी वार्ताओं से निकल कर दूसरे प्रसंग पर आऊंगा पर जाते-जाते दो श्लोक मन में अटक गए। इन्हें उधृत नहीं करूँ तो शृंखला अधूरी रह जायगी। आईये रहस्यमयी वार्ता के इन श्लोकों को देखिये। कहीं कोई भी त्रुटि मुझसे हो रही हो तो निवेदन है नि:संकोच कहियेगा ताकि उसे सुधारने का प्रयत्न करूँ।

कृष्ण! त्वं कुत्र गतोऽसि चाद्य मृगयासक्तो वनान्तं गतो
गन्धोऽन्यो वनपुष्पजः श्रमजलं घर्मक्षतं कण्टकैः।
अस्त्वेवं मृगया तु केनचिद् अहो दष्टोऽधरो दर्शियते
शङ्खपूरणमत्र कारणमिदं कुर्यां प्रमाणनि ते॥

गोपी : कृष्ण! त्वं कुत्र गतोऽसि चाद्य = हे कृष्ण! कहाँ थे आप आज?

कृष्ण : मृगयासक्तो वनान्तं गत: = मृग की खोज में वन गया था।

गोपी : गन्धो अन्यो वनपुष्पज: = परन्तु मुझे कुछ और गंध मिली, जो की घने जंगल की फूलों की थी।

कृष्ण : श्रमजलं घर्मक्षतं कण्टकै: = यह मेरे पसीने की थी जो गर्मी और मैं काँटों से घायल हुआ उसकी थी।

गोपी : अस्तु एवं मृगया = तो यह जंगली जानवरों को खजने से थी? तु केनचिद् अहो दष्टोऽधरो दृश्यते? = परन्तु आपके ओंठ तो किसी और के चबाये लगते हैं?

कृष्ण : शङ्खपूरणमत्र कारणमिदं = कारण यह है कि मैंने शंख बजाए उससे हो गए।
कुर्यां प्रमाणनि ते = कहो तो साक्ष ला दूँ।

अम्भस्ते शयनीय-मेत-दुदधे-र्लीलोपधानं फणी
त्वत्तेज:परमाणुरेष दहनो भृत्याः समस्ताः सुराः।
कुक्षिन्यस्त-समस्त-भारजगतः किं स्यात्तुलारोपणे व्यर्थं वाच्यमिदं
स्त्रियोपहसितः स्मेरो हरिः पातु नः॥

उदधे अम्भस्ते शयनीयं = समुद्र का जल तुम्हारे शयन का स्थान है। एतत् लीलोउपधानं फणी = तुम जिस तकिये पर सिर रख कर आराम करते हो वह सर्पराज शेष का है। एष दहनः = यह अग्नि, त्वत् तेज:परमाणुः = और कुछ नहीं तुम्हारे तेज के अनु-अनु से निकल रही है। भृत्याः समस्ताः सुराः = सभी देवी देवता तुम्हारी पूजा करते हैं। कुक्षिन्यस्त-समस्त-भारजगतः पूरी सृष्टि का भार तुम्हारे पेट पर धरा है। तुलारोपणे तुलना करो, किं स्यात्? = तुम्हें क्या हो सकता है? स्त्रियोपहसितः और अब त्रियां तुम्हारे ऊपर हंस रही हैं। व्यर्थं वाच्यमिदं, अतः तुम्हारा कथन अर्थ हीन है। स्मेरः = हे सस्मित मुस्कान लिए हरिः पातु नः = हरि, आप हम सब की रक्षा करो।

दृष्टव्य :- कृष्ण की लीला अद्भुत है। वे ऐसे कितने ही भावपूर्ण श्लोकों को निर्मित कर देती हैं, जिसमें गोपियाँ उन्हें छेड़छाड़ वाले अंदाज में बात करती हैं।

यह श्लोक श्री कृष्णाकर्नामृतं नामक ग्रन्थ से उधृत है।

अगली दो कड़ियाँ संस्कृत की महत्ता को दर्शाती हुई पढ़ियेगा। कैसे पूरा एक अध्याय संस्कृत के शब्द सामर्थ्य से रचा गया। दूसरे हमारी संस्कृति। राजनीति में संस्कृत का महत्व।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

12 जून, 2020

भाग-36

देववाणी संस्कृत के शीर्षस्थ कवियों में महाकवि माघ व भारवि दोनों का नाम सम्मान से लिया जाता है। महाकवि भारवि कृत किरातार्जुनीयम् व महाकवि माघ विरचित शिशुपालवधम् कलापक्ष के लिहाज से संस्कृत के श्रेष्ठतम महाकाव्य हैं। संस्कृत महाकाव्यों में रचना-कौशल और भावाभिव्यंजना की उत्कृष्टता के लिए दो त्रयी प्रसिद्ध है-लघुत्रयी और बृहत्त्रयी। बृहत्त्रयी में माघ रचित शिशुपाल वध की बात हम आज करेंगे।

महाकाव्यत्व-माघ रचित शिशुपालवधम् महाकाव्य के लक्षणों को सर्वाधिक ग्रहण करने वाला महाकाव्य है। इसीलिए विद्वानों के बीच एक लोकोक्ति हैं-काव्येषु माघः कवि कालिदासः। अर्थात् कवि की दृष्टि से कालिदास श्रेष्ठ है, किन्तु महाकाव्य के लेखन में माघ उत्कृष्ट है। माघ वास्तव में एक प्रकाण्ड विद्वान थे। उनके पाण्डित्य और कवित्व के विषय में कई प्रशस्तियाँ विख्यात है। इनके शब्द भण्डार के विषय में कहा गया है-नवसर्गे किराते 'च' नवसर्गे 'च' नैषधे। नवसर्गगते माघे नव शज़्दो न जायते (विद्यते)। अर्थात् माघ काव्य के नौ सर्ग समाप्त कर लेने पर संस्कृत में कोई नया शब्द जानने को रह ही नहीं जाता।

इसी प्रकार ग्यारहवें सर्ग में कवि प्रातःकाल का वर्णन करते हुए कवि लिखता है—

अरुणजलजराजीमुग्धहस्ताग्रपादा बहुल मधुपमालाकज्जलेन्दी वरोक्षी।
अनुपतित विरावैः पत्रिणां व्याहरन्ती रजनिमचिरजाता पूर्वसन्ध्या सुतेव।।

अर्थात् रात्रि की विदाई पर ऊषा उसका अनुगमन करती हुई ऐसी शोभायमान हो रही है जैसे वह रजनी की सद्यः प्रसूता कन्या हो। यहाँ रक्तकमलों की पंक्तियों की तुलना ऊषारूपी नायिका की हथेली से और पंखुड़ियों की तुलना उसकी अंगुली से की गयी है। इस प्रकार माघ के

प्रकृति चित्रण में वर्ण्यवस्तु के अनुरूप वातावरण और उसके समस्त अंगों का स्वाभाविक वर्णन देखने को मिलता है। अन्य कृतियों की अपेक्षा माघ के प्रकृति चित्रण में यह वैशिष्ट्य देखने को मिलता है कि उन्होंने काव्यशास्त्रीय दृष्टि का पूर्ण निर्वाह करते हुए उसे जन सुलभ बनाने का प्रशंसनीय प्रयास किया है।

शिशुपाल वध के सभी सर्ग अपने आप में एक अद्भुत काव्य समृद्धता लिए हुए हैं। परन्तु 11वें सर्ग का उल्लेख विशेष इसलिए है कि यह पूरा सर्ग एक तो प्रकृति वर्णन का है जिसमें पति एवं पत्नी के रात्रि प्रवास के उपरांत उषाकाल में उठना दर्शाया गया है और इन दृश्यों से उषाकाल को चित्रित किया है। दूसरे कुल 67 श्लोकों से रचित इस सर्ग में प्राय: साहित्य में उपलब्ध सभी अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

सूर्य के जितने भी उपलब्ध पर्यायवाची हैं, वे सभी इस सर्ग में मिल जायेंगे। सूर्य के एक नाम का दोबारा कहीं भी प्रयोग नहीं हुआ है। एक अर्थ के लिए माघ ने यथाशक्ति पुन: उसी नाम और आख्यान की आवृत्ति नहीं की है। उदाहरणार्थ – वासरणां विधातु:, अर्क, विवस्वान्, अतुहिनरूचिना, बालसूर्य:, सप्तसप्ति:, भास्करेण, तपन, अहिमरोचि, दिनकर, भानो, रवि, हरिदश्व:, भास्वता, धर्मभानु: आदि आदि अनेकों ऐसे शब्द हैं।

मुझे खास कर 47वां श्लोक अति प्रिय लगा, जो इस प्रकार है—

उदयशिखरिशृङ्गप्राङ्गणेष्वेव रिङ्गन्सकमलमुखहासं वीक्षितः पद्मिनीभिः।
विततमृदुकराग्रः शब्दयन्त्या वयोभिः परिपतति दिवोऽङ्के हेलया बालसूर्यः।।
।।11.47।।

यह उदयकालिक बाल सूर्य, उदयाचल के विस्तृत शिखरों के आँगन में घूमता हुआ, पद्मनियों द्वारा कमल रूपी मुख के हास्य के साथ देखा जाता हुआ, मानों पक्षियों के कलरव में बुलाती हुई अपनी माता (आकाश) की गोद में, अपने कोमल करों के अग्र भाग को फैलाता हुआ लीलापूर्वक हंसते

डोलते चला जा रहा है।

तात्पर्य यह है कि 'प्रभात सूर्य धीरे-धीरे आकाश में चढ़ रहा है।'

बस इतनी सी बात को श्लेषमूलक अतिश्योक्ति के अनुप्राणित रूपक अलंकार में लपेटकर ऐसा परोसा है कि आप चटखारे लेते रह जायेंगे। जैसे बालक आँगन में खेलता है तो बहुत-सी सुंदरियाँ उसे देखती हैं और उसकी माँ उसे बुलाती है-आओ, आओ और गोद में ले लेती है। बालक अपने कोमल हाथों को आगे बढ़ाता हुआ माँ की गोद में चढ़ जाता है।

यह शब्द सामर्थ्य, यह काव्य रचना, ये बिम्ब, ये उपमाएं संस्कृत छोड़ मुझे तो किसी अन्य भाषा में नहीं दिखती। धन्य है देववाणी संस्कृत और इसमें काव्य लिखने वाले रचनाकार।

अगली कड़ी में कुछ और बात करेंगे, तत्पश्चात दृष्टि कूट पर चर्चा करेंगे।

नमस्कार।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

13 जून, 2020

भाग-37

इस बार की श्रृंखला में मैं संस्कृत भाषा के भाषाई चमत्कार को न बतला कर एक अल्पविराम लेते हुए संस्कृत की महत्ता को बताऊंगा।

आज जब संस्कृत की बात करते हैं तो सब यह कह उठते हैं कि यह हिन्दुओं की है, अत: संस्कृत बोलना और लिखना भी सांप्रदायिक हो गया है। यह कब से हुआ ?

18 दिसंबर, 1976 को संविधान का 42वां संशोधन हुआ था, जिसमें संविधान की 59 धाराओं में परिवर्तन हुआ था और प्रस्तावना में भी परिवर्तन कर के शब्द सोशलिस्ट एवं सेज़्युलर जोड़ा गया। इस संशोधन के बाद ही सेज़्युलर का अर्थ बदल गया। उसके पहले हमारे संस्कृत में लिखे ग्रन्थ हमारी संस्कृति के द्योतक थे, अब वे मात्र धर्म के द्योतक रह गए। अगर ऐसा नहीं होता तो संस्कृत के बारे में जो बता रहा हूँ वह नहीं होता।

यह जानकारी मैं अग्रज श्री लक्ष्मी नारायण भाला जी, जिनका अनवरत स्नेह मुझे मिलता रहा है, के एक लेख के हवाले से दे रहा हूँ।

भारतीय संसद सविंधान का मन्दिर है और धर्म निरपेक्षता का प्रतीक। आईये संसद की एक यात्रा करते हैं—

जहाँ-जहाँ भारत का राज चिन्ह है, वहां-वहां हम यह वाज़्य पाएंगे : सत्यमेव जयते-इसका अर्थ है सत्य की जय सुनिश्चित करना ही राजनीति का ध्येय है। यह मुन्डकोपनिषद (3-1) 'सर्वदा सत्यसैव जयो भवति' का संक्षिप्त रूप है।

राज्यसभा के प्रवेशद्वार पर अंकित है 'सत्यं वद, धर्म चर' तैतरिय उपनिषद की शिक्षावल्ली से लिया गया वाक्य, जिसका अर्थ है सत्य वचन ही सत्य की प्रतिष्ठा में सहायक होता है।

राज्यसभा के दूसरे प्रवेशद्वार पर महाभारत के वन पर्व (207-74) से

लिया गया वाक्य-अहिंसा परमो धर्मः लिखा हुआ है। अहिंसा हमारी स्वतंत्रता का प्रमुख अस्त्र था।

राज्यसभा के ही एक अन्य प्रवेशद्वार पर ऋग्वेद (1-164-46) से लिया गया बोध वाक्य मिलेगा 'एकं सत् विप्रा बहुदा वदन्ति' सत्य एक ही होता है, विद्वतजन उसकी कई तरह से व्याख्या करते हैं।

एक और प्रवेशद्वार पर भगवत गीता के (18-45) से लिया गया यह वाक्य अंकित है 'स्वे स्वे कर्मण्य भिरतः लभते नरः' हर कोई अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए सिद्धि प्राप्त कर सकता है।

आईये अब लिफ्ट की ओर चलते हैं—

पहली लिफ्ट पर महाभारत 5-35-58 का यह श्लोक अंकित मिलेगा:

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः, वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम्।
धर्म सः न यत्र न सत्यमस्त, सत्यम् न तत् यत् छलमभ्युपैति॥

लिफ्ट संख्या 2 के गुंबद पर मनुस्मृति 8-13 से यह श्लोक अंकित है जो सभासदों के आचरण एवं व्यवहार के बारे में बताता है—

सभा वा न प्रवेष्टव्या, वक्तव्यम् वा समञ्जसम्।
अब्रुवन, विब्रुवन वापि नरो भवति किल्मिषी॥

भले ही कोई सभा में प्रवेश ही न करे, किन्तु जब प्रवेश करे तो ठीक तरह से धर्म एवं न्यायसंगत वचन ही बोलने चाहिए। जो सदस्य सभा में बोलेगा ही नहीं या झूठ बोलेगा, वह पाप का भागी होगा।

लिफ्ट संख्या 3 पर देखें क्या लिखा है—

दया मैत्री च भूतेषु दानम् च मधुरा च वाक्।
न ही दृशम् सं वननं त्रिशुलोकेषु विद्यते॥

(महाभारत-विदुर नीति)

प्राणीमात्र के प्रति दया, मैत्री दान देने की प्रवृति और मधुर संभाषण का स्वभाव यह चारों गुण एक साथ होना त्रिलोक में दुर्लभ है।

लिफ्ट नंबर-4 पर तो स्वयं शासक के लिए राजधर्म शुक्र नीति के श्लोक से सिखाया गया है—

सर्वदा स्यन्नृपः प्राग्यः, स्वमते न कदाचन।
सभ्याधिकारिप्रकृति-सभासत्सुमते स्थितः॥

राजधर्म शुक्रनीति 2-3

संसद भवन के प्रथम द्वार से होकर जब केन्द्रीय सभागृह के प्रांगण की ओर बढ़ते हैं तो प्रवेश द्वार के ऊपर यह लिखा मिलेगा—

अयं निजः परो वेति गणना लघु चेतसा।
उदारचरितानाम् तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

यह मेरा है, वह तेरा है, ऐसा छोटे मन वाले कहते हैं। उदार मन वालों के लिए तो पूरा विश्व एक परिवार है।

अंत में सभा के विशाल कक्ष में सभाध्यक्ष की पीठ के पीछे दीवार पर ललित विस्तार से ली गई बौद्ध चिंतन की यह सूक्ति—

धर्म चक्र प्रवृतनाय। ललित विस्तार अध्याय-26

धर्म की प्रतिक्रिया को गतिमान रखना ही हमारा लक्ष्य हो, यही हमारी कामना हो।

यह तो राज्यसभा की बात है, जिस संसद की दीवारों पर सब जगह संस्कृत में लिखे ये नीति वाक्य हों वह संसद धर्म निरपेक्ष कैसे हो सकती है। यह तो धर्म सापेक्ष ही होगी और धर्म सापेक्ष का अर्थ होता है सर्व धर्म समभाव या ये कहें की पंथ निरपेक्ष हो। ये वाक्य धर्मोचित है और संस्कृत एक भाषा है जो संस्कृति की सूचक है न की किसी पन्थ विशेष की। यह संस्कृत भाषा की समृद्धता ही है जिसके कारण संविधान निर्माण समिति ने संस्कृत को प्रमुखता दी। नमस्कार। ❍❍❍

—सुरेश चौधरी

16 जून, 2020

भाग-38

कुछ शृंखलाओं पूर्व मैंने लिखा था कि दृष्टि कूट के बारे में लिखूंगा, जो कि संस्कृत भाषा की अति शक्तिशाली शैली है। शब्दों को पहुँचाने की, जिसे समझने का कार्य एक चतुर पंडित ही कर सकता है। हिंदी के महाज्ञानी आचार्य श्री गिरेन्द्र सिंह भदौरिया जी ने भी मुझसे कहा था कि इस विषय पर अवश्य लिखूं। अत: उनके आदेश का पालन करता हुआ आज से इस नयी शृंखला को शुरू कर रहा हूँ।

आईये सबसे पहले हम देखें की दृष्टि कूट है क्या?

इस प्रकार की रचनाएं, जिनके शब्दों के साथ साधारण अर्थ भी रहता है, परन्तु फिर भी सरलता से भाव-गम्य नहीं होता और जिनका अर्थ शब्दों की भूल-भुलैया में छिपा रहता है, वे कूट कहलाते हैं। ऐसी रचनाएँ वाचक कूट के नाम से श्रीमद् भागवद में प्रसिद्ध है।

वास्तविकता में व्यक्त नाद शब्द है। शब्द अर्थ का द्योतक है, अर्थ ज्ञान का अनुचर है, ज्ञान ब्रह्म है और ब्रह्म ही कवि है, क्योंकि वही ज्ञान का अधिकारी होकर शब्द और अर्थ पर नियंत्रण करता है। वह उनसे खिलवाड़ करता है और प्रत्येक शब्द को अपना मनवांछित कार्य करने का आदेश देता है। साधारणत: पाठक 'अर्ध ढके शब्दों' को अर्ध ढके कूच और केश से समता देकर रसास्वादन ही कर ले, किन्तु गहन गंभीरता का नाद काव्य की अंतरात्मा में होता है।

सर्व ढके सोहे नहीं, उधरे होत कुबेस
अर्ध ढके छवि देत है, कवि-अच्छर, कुच, केश।

इस प्रकार के काव्य चित्र, कवि चित्रकार बन बिना रंग के ही मनुष्यों के हृदय की शून्य भित्ति पर चित्रित करता है, वह युगों तक भी उसका साथ नहीं छोड़ता।

गणेश जी को भी जब कहा गया कि वे महाभारत का लेखन करें तो उन्होंने

कहा–मैं निरंतर लिखता जाऊँगा। जिस समय मेरा हाथ रुक जायेगा तो मैं लिखना छोड़ दूंगा। व्यास जी ने शर्त मान ली और कहा–जो कुछ भी लिखें उसका अर्थ समझ कर लिखें। महाभारत का लिखना आरंभ हुआ। जहाँ कहीं व्यास जी को विचारने के लिए समय की आवश्यकता होती, वे झट कोई कूट श्लोक द्वारा गणेश जी को सोचने को विवश कर देते और उतने समय में वे विचार कर आगे बढ़ जाते। अगर संस्कृत साहित्य की संपन्नता देखें तो कूटों का प्रयोग वैदिककाल से ही होता रहा है, इसे वाणी कूट कहते थे। ठीक ही है जो लिखने वालों के लिए वाणी कूट है, वह पढ़ने वालों के लिए दृष्टि कूट है। संस्कृत साहित्य के अलावा संस्कृत के शब्दों को लेकर जितने कूटों का लेखन सूरदास ने किया है, उतना किसी ने नहीं।

आज से कुछ शृंखलाओं तक हम इन कूटों का अवलोकन करेंगे—

मुण्डक उपनिषद (3–1–1)

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्य: पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ॥1 ॥

अब इसका कूट अर्थ देखिये; दो पक्षी (जीव और ईश्वर) जो सयुजा (नियम्य) सखाया (चैतन्य रूप होने से तुल्य स्वभाव के) एक ही वृक्ष (देह और संसार) पर बैठे हैं। उनमें से एक (जीव) स्वादिष्ट पीपल का भक्षण करता है (कर्मफल को भोगता है) और दूसरा (ईश्वर) कुछ न भक्ष कर (कर्मफलों को न भोग कर) प्रकाशवान रहता है।

वेद और उपनिषद काल में कूटों का रूप ब्रह्म, जीव, संसार की परिधि में बंधा है। इसका वास्तविक विकास तो महाभारत काल में हुआ, जहां व्यास जी ने शब्द ब्रह्म को हाथों में ग्रहण करके जहाँ चाहा वहाँ फेंक दिया ताकि वे उस अंधकार को प्रभाषित कर सकें।

महाभारत के कूटों को अगली शृंखला में देखेंगे। ❍❍❍

—सुरेश चौधरी

18 जून, 2020

भाग-39

पिछली कड़ी में हमने दृष्टि कूट के बारे में जाना था कि यह शब्द, संस्कृत के 'दृष्ट' तथा 'कूट' शब्दों से बना है, जिसका साहित्यिक अर्थ है 'जो सहज रूप से देखने सुनने पर समझा न जा सके'। तिल की ओट में पहाड़, दृष्टि से छलना इत्यादि अर्थात् साहित्य के समर्थ अंग श्लेषादि शब्दालंकारों से आवृत ऐसे अनेक अर्थ वाले शब्दों की संरचना करना, जिनका अर्थ उसके शब्दों की अपेक्षा रूढ़ि प्रसंग से जाना जा सके। वस्तुतः इस यौगिक शब्द 'दृष्टकूट' की अर्थगूढ़ता तथा जटिलता ही उसकी विशेषता है, जो अक्षरों में उलझी होने के कारण दुर्बोध शब्दों की भूल-भुलैया में छिपी रहती है।

साहित्य में इस प्रकार के अनेक शब्द ब्रह्म हैं, जिन्हें कविजनों ने मुख्य यौगिक शब्द बनाकर उनके स्वाभाविक अर्थों के अतिरिक्त यमक श्लेषादि अलंकारों के अन्य अर्थों को भी व्यक्त करते हुए साहित्य को सहज सुंदर बना दिया है।

साहित्य के इतिहास के ग्रंथों में इसे चित्रालंकारों का चक्रव्यूह कहा गया है, जो वास्तव में शब्दार्थगोपन का चक्रव्यह है।

आईये एक दृष्टिकूट महाभारत से देखते हैं। यहाँ संस्कृत शब्दों की चपलता और चमत्कार साथ ही यमक श्लेस अलंकारों का सामूहिक प्रयोग भी है : अज्ञातवास प्रकरण में बृहनल्ला-वेशधारी अर्जुन को देख कर भीष्म ने द्रोण से पूछा कि रथ में कौन आ रहा है। इसके उत्तर में द्रोणाचार्य यह श्लोक कहते हैं—

नदीज लंकेश्वनारिकेतो नगाह्वयम् नाम नगारि सूनुः
एषोऽअंगना वेशधरः किरीटिः जित्वा वयं नेष्यति चाद्य गावः॥

नदीज : नदी से जन्म है जिसका (अर्थ-भीष्म गंगा से जन्मे थे)। लंकेश-केतो-लंकेश-रावण उसका वनारिकेतो (अशोक वन को केतु

रूप) हनुमान हुए, जिसकी ध्वजा में हैं अर्जुन। नगाह्वयम् नाम–हस्ती या अर्जुन के पेड़ से संबंधित, नगरिसुनु: नग (पहाड़) उसका शत्रु इंद्र, उसका सूनु, अर्थ–इंद्र का पुत्र भी अर्जुन हुआ। एषो वेशधर–यह स्त्री वेशधारी। किरीटी : अर्जुन। जित्वा–गाव: हमको जीत कर गायों को ले जायेगा।

अर्थ हुआ : हे भीष्म! यह कपिध्वज, अर्जुन वृक्ष अथवा हस्तिनापुर से संबंधित इंद्र पुत्र नारी के वेश में अर्जुन है, जो हम को जीत कर गायों को ले जायेगा।

यह खूबसूरती जो शब्दों के चक्रव्यूह में हमें फंसा कर गहन विचार करने को विवश कर दे, केवल संस्कृत शब्दों में ही है।

आईये कल कुछ और दृष्टि कूट महाभारत से ही देखेंगे।

○○○

—सुरेश चौधरी

21 जून, 2020

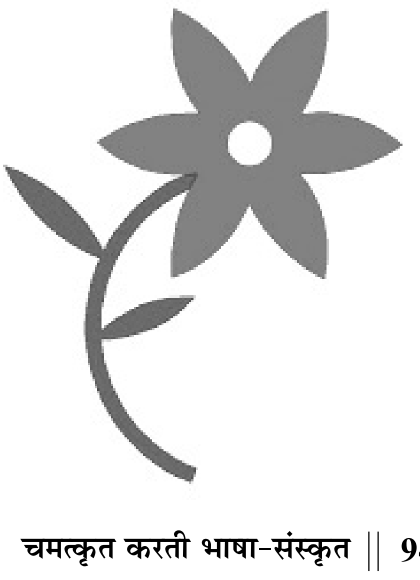

भाग-40

पिछली बार हमने पढ़ा महाभारत में दिए गए दृष्टि कूट से उदाहरण। हमने पिछली कड़ी में यह बताया था कि महाभारत की रचना के समय लिखने के लिए गणेश जी ने कहा था कि अगर रचना जरा भी रुचिकर नहीं लगी तो लिखना छोड़ दूंगा। इसलिए व्यास जी ने बीच-बीच मे दृष्टिकूट श्लोक लिखे, ताकि रुचिकर भी लगे और गणेश जी जब तक अर्थ समझें इनको सोचने का समय भी मिले। इस प्रकार कहते हैं प्राय: हर 100 श्लोकों के अंतराल पर एक दृष्टि कूट श्लोक इन्होंने लिख दिया। दृष्टिकूट श्लोक का प्रयोग माघ, ममट इत्यादि सभी विद्वानों ने किया है, परंतु सूरदास के कूट के आगे सब क्षीण पड़ जाते हैं। सूरदास ने शब्द शक्ति संस्कृत को लेकर अवधी में उसे गढ़ दिया तो उच्चारण की छूट उन्हें मिल गई, जैसा कि निम्न पद से स्पष्ट है—

नक्षत्र जुग जोरि अरध करि सोई बनत अब खात।

कृष्ण वियोग में गोपिकाओं का कथन है-ग्रह (यहाँ ग्रह अर्थात् 9), नक्षत्र (अर्थात् 27), जुग (अर्थात् 4) को जोरि (जोड़कर) प्राप्त 40 को अरध करि (आधा करके) प्राप्त 'बीस' (अर्थात् बिस=विष) खाते ही अब बनता है। अब यहाँ उन्होंने विष और बीस के सम उच्चारण का लाभ ले लिया जो कि अवधी में मान्य उच्चारण है। संस्कृत शब्दों द्वारा बनाया चित्र एक उत्कृष्ट कूट चित्र का निर्माण करता है।

इस झोंक में आज सुबह बैठे-बैठे मैं भी एक कूट लिखने का प्रयास कर बैठा। आईए आप भी देखिए कि प्रयास सही हुआ कि नहीं—

बीस बीस बन्यो जीयो घबरावे!!
सारंग सो जो देह सजतो, सारंग सो देह लिपटावे
उनिश बीश की गिनती सीखे, माणस बोही इब तर जावे
जीवन तो पाखी सो बित्यो, बरस बरस रह्यो हरखावे

बरदाई सो बरदेवे जग, बरद बरद मोहे ठुकरावे
इंदु बिंदु सिंधु भांत चमके, बिंदु सिंधु सो जल छलकावे
नयो जनम जानकी जू भयो, जान की जान यो पछतावे।

यहाँ मैंने पहले बीस को सन् 2020 के संदर्भ में और दूसरे को विष के संदर्भ में लिखा है। पहला सारंग स्वर्ण हार, दूसरा सर्प, बरस-साल, बरस-बरसना, बरदाई-चंद वरदाई, बरदेवे-वरदान देना, बरद-वरद, वरिष्ठ, बरद-उभरता, इंदु बिन्दु सिंधु-चंद्र के परछाई सागर में, बिन्दु सिंधु सो जल-सागर मे बूंद भर जल (यहाँ जल को दो अर्थ में लिया है : जल-पानी, जल-जलना, गर्मी से सागर की बांध सुख जाती है, वैसे ही हीनता से सुख रहा हूँ), जानकी जी की कृपा से जन्म लिया, यह जानकर जान की परवाह करता हूँ, इसलिए पछता रहा हूँ। संस्कृत श्लोक—

आत्मानमन्यं च स वेद विद्वानपिप्पलादो न तु पिप्पलादः
योऽविद्यया युक्स तु नित्यबद्धो विद्यामयो यः स तु नित्यमुक्तः

एक वृक्ष जिसके घोंसले में दो पक्षी रहते हैं। वे दोनों समान-समान हैं, सखा है, केवल इच्छा से ही नीड़ में निवास करते हैं। एक तो उसमें पीपल को खाता है, दूसरा बिन खाए रहता है। ऐसा समझो कि शरीर एक वृक्ष है, इसमें हृदय का घोंसला बनाकर जीव और ईश्वर नाम के दो पक्षी रहते हैं। वे दोनों चेतन होने के कारण समान हैं और कभी न बिछुड़ने के कारण सखा हैं। इनके निवास करने का कारण केवल लीला ही है। इतनी समानता होने पर भी जीव तो शरीर रूप वृक्ष के फल सुख-दु:ख आदि भोगता है, परन्तु ईश्वर उन्हें न भोगकर कर्मफल सुख-दु:ख आदि से असंग और उनका साक्षी मात्र रहता है।

इस तरह के बिम्ब, यमक श्लेष यदि अलंकार के द्वारा चित्र खिंच कर एक छल करने वाले चित्र की संरचना ही दृष्टि कूट है। आशा है आपको यह पसंद आया होगा। अगली शृंखला में और कूट को देखेंगे। ○○○

—सुरेश चौधरी

1 जुलाई, 2020

भाग-41

जयतु संस्कृतं।

संस्कृत दिवस्य हार्दिक्यः शुभकामनाः!!

आज संस्कृत दिवस है। 1969 में जब त्रिगुण सेन शिक्षा मंत्री थे तब श्रावण पूर्णिमा (रक्षाबंधन) दिवस को संस्कृत दिवस घोषित किया गया था। संस्कृत क्यों चमत्कृत करने वाली भाषा है और इसका क्या महत्व है, वह इस घटना से स्पष्ट होगा—

संस्कृत भाषायाः अस्माकं संस्कृत्याः च महिमा सन्दपते

ग्रामोफोन का आविष्कार थॉमस अल्वा एडिसन ने 19वीं शताब्दी में किया था। जब उन्होंने ग्रामोफोन रिकॉर्ड का आविष्कार किया, तब उन्होंने अपनी पहली रिकॉर्ड मानव की आवाज में करनी चाही। वह किसी प्रतिष्ठित विद्वान की आवाज रिकॉर्ड करना चाहता था। इसके लिए उन्होंने इंग्लैंड के प्रोफेसर मैक्स मुलर को चुना। एडिसन के प्रति बहुत सम्मान रखने वाले मैक्स मुलर ने उन्हें उपयुक्त समय पर आने के लिए कहा-यूरोप महाद्वीप के अधिकांश विद्वान इंग्लैंड में एकत्रित हुए। सभी ने एडिसन की उपस्थिति की सराहना की। बाद में एडिसन के अनुरोध पर मैक्स मुलर मंच पर आए और उस नए यंत्र के सामने बोले। फिर एडिसन अपनी प्रयोगशाला में वापस चला गया और दोपहर तक एक डिस्क के साथ वापस आया और ग्रामोफोन पर उसे बजाया। वाद्य यंत्र से मैक्स मुलर की आवाज सुनकर दर्शक रोमांचित हो गए। थॉमस एडिसन की प्रशंसा और बधाई के कई दौरों के बाद मैक्स मुलर ने मंच पर आए और विद्वानों को संबोधित किया और उनसे पूछा-''आपने सुबह मेरी मूल आवाज सुनी। फिर आपको दोपहर में इस यंत्र से एक

ही आवाज आती हुई सुनाई दी। क्या आप समझते हैं कि मैंने सुबह क्या कहा या आपने दोपहर में क्या सुना?'' दर्शक चुप हो गए क्योंकि वे उस भाषा को नहीं समझ सके, जिसमें मैक्स मुलर ने बात की थी। यह एक ऐसी भाषा थी जिसे यूरोपीय विद्वानों ने कभी नहीं सुना था। मैक्स मुलर ने तब बताया कि उन्होंने क्या बोला था। उन्होंने कहा कि उन्होंने जो भाषा बोली वह संस्कृत थी और यह ऋग्वेद का पहला मन्त्र था, जो कहता है–'अग्नि मिले पुरोहितम' यह ग्रामोफोन प्लेट पर पहला रिकॉर्ड किया गया सार्वजनिक संस्करण था।

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवं रत्वीजम।*
होतारं रत्नधातमम।।

(ऋग्वेद 1.001.01)*

उन्होंने दर्शकों को संबोधित करते हुए कहा—

'वेद मानव जाति का सबसे पुराना ग्रन्थ है और 'अग्नि मिले पुरोहितम' ऋग्वेद का पहला छंद है।'*

'आदिम समय में जब लोगों को यह नहीं पता था कि कैसे अपने शरीर को ढंकना है और शिकार करके गुफाओं में रहना है। भारतीयों ने उच्च सभ्यता प्राप्त की थी और उन्होंने वेदों के रूप में दुनिया को सार्वभौमिक दर्शन दिए थे।'

जब 'अग्नि मिले पुरोहितम' को दोबारा सुनाया गया तो पूरे श्रोता सम्मान की निशानी के रूप में मौन खड़े हो गए।

इस श्लोक का अर्थ है—

भावार्थ :- हे अग्नि स्वरूप परमात्मा! इस यज्ञ के द्वारा मैं आपकी आराधना करता हूँ। सृष्टि के जन्म से पूर्व भी आप थे और आपके अग्नि रूप से ही सृष्टि की रचना (जन्म) हुआ है। हे अग्नि रूप परमात्मा!

आप सब कुछ देने वाले हैं। आप प्रत्येक समय एवं प्रत्येक ऋतु में पूज्य हैं। आप ही जगत के सब जीवों को सब पदार्थ देने वाले हैं और प्रलय में संपूर्ण ब्रह्मांड को अपने में समाहित (समेटने) करने वाले हैं। हे परमात्मा! आप ही सब उत्तम पदार्थों (रत्न, शरीर) को धारण कराने वाले हैं।

देव भाषा संस्कृत का मान, महत्व, चमत्कार इससे ज्यादा कोई कैसे वर्णित कर सकता है। मैक्स मुलर जानता था कि प्रथम आवृति ग्रामोफोन रिकॉर्ड पर शुद्ध होनी चाहिए और संस्कृत से शुद्ध और निर्दोष भाषा कोई हो नहीं सकती।

❍❍❍

—सुरेश चौधरी

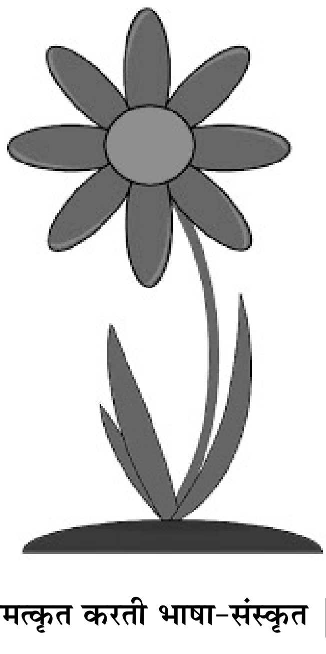

भाग-42

संस्कृत भाषा के सबसे बड़े शब्द के बारे में जानकारी देने से पूर्व इस शब्द की लेखिका के बारे में जानकारी देना आवश्यक है। विजयनगर साम्राज्य भारतीय कला, साहित्य, संस्कृति आदि का एक महत्वपूर्ण संरक्षक था। इस साम्राज्य के सम्राट अच्युतदेव राय, जो 1529 से 1542 तक सम्राट रहे, की रानी तिरुमलाम्ब अतिविदुषी थीं। तिरुमलाम्बिका को 'राजाधिराजाच्युतरायसार्वभौमप्रेमसर्वस्वविश्वासभुवा' (राजाधिराज अच्युतराय सार्वभौम के प्रेम का सर्वस्व विश्वास पाने वाली) कहा गया है। वे संस्कृत सहित अनेक भाषाओं पर अपना अधिकार रखती थीं। वे काव्यों, नाट्यों, काव्यशास्त्र, वेदों तथा पुराणों की ज्ञाता थीं। चम्पू काव्य की शैली में उनका लिखा वरदाम्बिकापरिणयचम्पू: (वरदाम्बिका के विवाह का गद्यपद्यमय काव्य) संस्कृत के मनोहरी काव्यों में एक है। बाणभट्ट संस्कृत गद्य में लंबे सामासिक शब्दों के प्रयोग के लिए विख्यात हैं; किन्तु, तिरुमलाम्ब इस कला में उनसे किसी प्रकार कम नहीं हैं। चम्पू काव्य के रूप में लंबे शब्दों वाली यह कृति पद्यमय होने से बहुत सरस और पठनीय भी है।

वरदाम्बिकापरिणयचम्पू: सम्राट अच्युतदेव राय के शासनकाल में लिखा गया था। इस काव्य के अनुसार अच्युतदेव राय ने मन्दिर में एक सुन्दर कन्या को देखा और प्रथम दृष्टि में ही प्रेम हो गया। यह कन्या सूर्यवंशी राजकुमारी वरदाम्बिका थी; जो माँ गौरी के दर्शन करने मन्दिर आई थी; ध्यानमग्न वरदाम्बिका ने आँखें खोली तो अच्युतदेव राय को देखा और उन्हें भी प्रेम हो गया। दोनों अपने कर्तव्य के निर्वहन के लिए लौट गए, किन्तु विरह में एक-दूसरे के बारे में सोचते रहे; और जग को भूलने लगे। कुछ समय उपरान्त अच्युतदेव राय की ओर से विवाह के आग्रह का सन्देश आया और

उनका धूमधाम से विवाह संपन्न हुआ। कुछ समय उपरान्त उनके पुत्र वेङ्कटाद्रि का जन्म हुआ। जिसके युवराज्याभिषेक के साथ ही काव्य समाप्त होता है। इस काव्य के अन्त में लेखिका ने अपना परिचय भी प्रस्तुत किया है; जो सामान्यतया अन्य काव्यों में विरल है।

इस काव्य के एक खण्ड, तुण्डीरदेशवर्णन में यह प्रसिद्ध शब्द मिलता है जिसे संस्कृत का सबसे बड़ा शब्द कहा जाता है। छप्पन शब्दाशों से रचा यह शब्द अनेक विशेषणों और उपसर्गो, प्रत्ययों से भूषित है।

निरन्तरान्धकारितदिगन्तरकन्दलदमन्दसुधारसबिन्दुसान्द्रतरघनाघ
नवृन्दसन्देहकरस्यन्दमानमकरन्दबिन्दुबन्धुरतरमाकन्दतरुकुलतल्प
कल्पमृदुलसिकताजालजटिलमूलतलमरुवकमिलदलघुलघुलयकलितर
मणीयपानीयशालिकाबालिकाकरारविन्दगलन्तिकागलदलालवङ्गपाट
लघनसारकस्तूरिकातिसौरभमेदुरलघुतरमधुरशीतलतरसलिलधारानिरा
करिष्णुतदीयविमलविलोचनमयूखरेखापसारितपिपासायासपथिकलोकान्

(छप्पन शब्दाशों से रचा यह शब्द अनेक विशेषणों और उपसर्गो, प्रत्ययों से भूषित है—

निरन्तरान्धकारित (सदा अन्धेरे में रहने वाले)
दिगन्तर (अन्यत्र, अन्य स्थान पर)
कन्दलदमन्द (फल-फूलों से युक्त)
सुधारस (फूलों का मधु)
बिन्दु
सान्द्रतर (उत्कट, प्रबल)
घनाघन (इन्द्र; बरसात करते मेघ)
वृन्द (दल)
सन्देहकर (सन्देह उत्पन्न करने वाला)

स्यन्दमान (चन्द्रमा; बहता हुआ)
मकरन्द (पुष्पों का रस)
बिन्दु
बन्धुरतर (सुखद, सुन्दर, आकर्षक)
माकन्द (आम के वृक्ष; माकन्दी पीला चन्दन)
तरु (वृक्ष)
कुल
तल्प (आसन, रक्षक)
कल्प (सक्षम, नृत्य)
मृदुल (सुकोमल, जल)
सिकता (बालू)
जाल
जटिल
मूल
तल
मरुवक (एक प्रकार की तुलसी के जैसी झाड़ी)
मिलद (मिलते हुए)
लघु (छोटे)
लघु (छोटे)
लय (स्वर की मधुरता)
कलित (गुनगुनाते हुए, प्रेरित)
रमणीय (मनोरम)
पानीय (पोषित, संरक्षित; पानी)
शालिका (कुटिया, घर)
बालिका

करारविन्द (कमल जैसे हाथ)
गलन्तिका (पानी का झारा)
गलदेला (एक प्रकार का सरकण्डा)
लवङ्ग (लौंग का वृक्ष)
पाटल (गुलाब)
घनसार (कर्पूर, कपूर)
कस्तूरिकातिसौरभ (बहुत सुगन्धित कस्तूरी)
मेदुर (चिकने, घने)
लघुतर (छोटे)
मधुर (मीठे)
शीतलतर (बहुत ठण्डी)
सलिलधारा (जल की धारा)
निराकरिष्णु (निरोधक, रोकते हुए)
तदीय (उनके)
विमल (स्वच्छ, सुन्दर)
विलोचन (नेत्र, दर्शन)
मयूख (प्रकाश की किरणें)
रेखापसारित (रेखाओं में बिखरती (अपसारित))
पिपासायास (प्यासे (पिपासु), थके (आयास))
पथिक
लोकान् (मनुष्य, देखना)

इस शब्द की संपूर्ण व्याख्या में ही अनेक पृष्ठ लग सकते हैं। किन्तु इसका भावार्थ प्रस्तुत करने का प्रयास करता हूँ—

इन यात्रियों की प्यास से होने वाले कष्ट को कन्याओं की तीखी आँखों की किरणों के गुच्छों ने दूर किया। प्रकाश-किरणें जो जलधाराओं पर हिलोर

लेती थीं; इलायची, लौंग, केसर, कपूर और कस्तूरी की सुगंध युक्त मीठे और ठंडे पानी को कुमारियों के कमल-समान हाथ घड़े में धारण किए हुए; पैर सुकोमल रेत के आसन पर पड़ते थे, नए अंकुरित आम के पेड़ों के समूह के मध्यवर्ती स्थान को लगातार अंधेरा करते थे और जो गुलाब आदि फूलों के रस की टपकती बूंदों के कारण और अधिक आकर्षक लगते थे। जैसे घने वर्षा वाले बादलों की एक पंक्ति का भ्रम पैदा करता है, जिसमें प्रचुर मात्रा में अमृत से भरा हो।

किन्तु यह एक अकेला लंबा शब्द नहीं है; शब्दों से शब्दों को शब्दों में बुनने में निपुण तिरुमलम्बा ने अनेक ऐसे दीर्घकाय शब्द रचे हैं। एक अन्य उदाहरण इसी शब्द के पूर्व का यह शब्द है—

अनुकूल-जागरूक-विमल-कुसुम-कोरक-राजत-भाजन- विराजित-हारिद्र-कर्दम-कवल-जाल-लालनीय-परिपाक-कपिल- फलोत्कार-हारि-महाराम-कुटुंबि-नारङ्गलता-नताङ्गी-समुत्तरङ्गी- कृत-जनपद्-सौभाग्य-रमा-योग्यतम-द्वन्द्व-कन्दलदमन्द-विवाह-महोत्सवान्

विशेष :- गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स इसे विश्व के सबसे लंबे शब्द के रूप में मान्यता दी है।

—सुरेश चौधरी

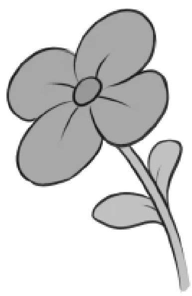

संस्कृत के बारे में रोचक तथ्य

1. 3000 वर्ष पूर्व तक भारत में संस्कृत बोली जाती थी तभी तो ईसा से 500 वर्ष पूर्व पाणिनि ने दुनिया का पहला व्याकरण ग्रन्थ लिखा था, जो संस्कृत का था। उसका नाम 'अष्टाध्यायी' है।
2. संस्कृत विश्व की सबसे पुरानी पुस्तक ऋग्वेद की भाषा है, इसलिए इसे विश्व की प्रथम भाषा मानने में कहीं किसी संशय की संभावना नहीं है।
3. इसकी सुस्पष्ट व्याकरण और वर्णमाला की वैज्ञानिकता के कारण सर्व श्रेष्ठता भी स्वयं सिद्ध है।
4. संस्कृत ही एक मात्र साधन है जो क्रमश: अंगुलियों एवं जीभ को लचीला बनाते हैं।
5. संस्कृत अध्ययन करने वाले छात्रों को गणित, विज्ञान एवं अन्य भाषाएं ग्रहण करने में सहायता मिलती है।
6. संस्कृत केवल एक मात्र भाषा नहीं है अपितु संस्कृत एक विचार है। संस्कृत एक संस्कृति है, एक संस्कार है। संस्कृत में विश्व का कल्याण है, शान्ति है-सहयोग है "वसुधैव कुटुंबकम्" की भावना है।
7. नासा का कहना है कि 6th और 7th generation super computers संस्कृत भाषा पर आधारित होंगे।
8. संस्कृत विद्वानों के अनुसार और सौर परिवार के प्रमुख सूर्य के एक ओर से 9 रश्मियां (beams of light) निकलती हैं और ये चारों ओर से अलग-अलग निकलती हैं। इस तरह

कुल 36 रश्मियां हो गई। इन 36 रश्मियों की ध्वनियों पर संस्कृत के 36 स्वर बने।

9. कहा जाता है कि अरबी भाषा को कंठ से और अंग्रेजी भाषा को केवल होठों से बोला जाता है, किन्तु संस्कृत में वर्णमाला को स्वरों की आवाज के आधार पर कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग अंत:स्थ और ऊष्म वर्गों में बांटा गया है।
10. संस्कृत उत्तराखंड की आधिकारिक राज्य भाषा है।
11. अरब आक्रमण से पहले संस्कृत भारत की राष्ट्र भाषा थी।
12. कर्नाटक के मट्टुर गांव में आज भी लोग संस्कृत में ही बोलते हैं।
13. जर्मनी के14 विश्वविद्यालय लोगों की बढ़ती मांग पर संस्कृत की शिक्षा उपलब्ध करवा रहे हैं, लेकिन आपूर्ति से ज्यादा मांग होने के कारण वहां की सरकार संस्कृत सीखने वालों को उचित शिक्षण व्यवस्था नहीं दे पा रही है।
14. हिन्दू यूनिवर्सिटी के अनुसार संस्कृत में बात करने वाला मनुष्य बीपी, मधुमेह, कोलेस्ट्रॉल आदि रोगों से मुक्त हो जाएगा।
15. संस्कृत में बात करने से मानव शरीर का तंत्रिका तंत्र सक्रिय रहता है जिससे व्यक्ति का शरीर सकारात्मक आवेश के साथ सक्रिय हो जाता है।
16. यूनेस्को ने भी मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की अपनी सूची में संस्कृत वैदिक जप को जोड़ने का निर्णय लिया है। यूनेस्को ने माना है कि संस्कृत भाषा में वैदिक जप से मानव मन, शरीर और आत्मा पर गहरा प्रभाव पड़ता है।
17. शोध में पाया गया है कि संस्कृत पढ़ने से स्मरण शक्ति बढ़ती है।

18. संस्कृत वाक्यों में शब्दों को किसी भी क्रम से रखा जा सकता है। इसमें अर्थ का अनर्थ होने की कोई संभावना नहीं होती है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि सभी शब्द विभक्ति और वचन के अनुसार होते हैं। जैसे–अहं गृहं गच्छामि या गच्छामि गृहं अहं दोनों ही ठीक हैं।

19. नासा के वैज्ञानिकों के अनुसार जब वे अन्तरिक्ष ट्रेवलर्स को मैसेज भेजते थे तो उनके वाक्य उल्टे हो जाते थे, इस वजह से उनके मैसेज का अर्थ ही बदल जाता था। उन्होंने कई भाषाओं का प्रयोग किया, लेकिन हर बार यही समस्या आई। अन्त में उन्होंने संस्कृत में मैसेज भेजा, क्योंकि संस्कृत वाक्य उल्टे हो जाने पर भी अपना अर्थ नही बदलते।

20. संस्कृत भाषा में किसी भी शब्द के समानार्थी शब्दों की संख्या सर्वाधिक है। जैसे–हाथी शब्द के लिए संस्कृत में 100 से अधिक समानार्थी शब्द हैं।

ये हमारी एक छोटी सी कोशिश थी कि आप सबको संस्कृत व अपनी संस्कृति से जोड़ने को। हमें उम्मीद है कि संस्कृत के बारे में पढ़कर आपको अपनी इस भाषा पर गर्व जरूर हुआ होगा।

❍❍❍

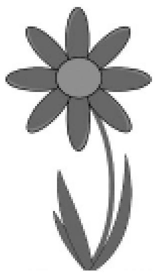

ऋगवेद में π का मान 32 अंक तक शुद्ध है

देश में एक ऐसा वर्ग बन गया है जो कि संस्कृत भाषा से तो शून्य हैं, परंतु उनकी छद्म धारणा यह बन गयी है कि संस्कृत भाषा में जो कुछ भी लिखा है वे सब पूजा-पाठ के मंत्र ही होंगे जबकि वास्तविकता इससे भिन्न है।

देखते हैं—

''चतुरस्त्रं मण्डलं चिकीर्षन्न् अक्षयार्ध मध्यात्प्राचीमभ्यापातयेत्।

यदतिशिष्यते तस्य सह तृतीयेन मण्डलं परिलिखेत्।''

बौधायन ने उक्त श्लोक को लिखा है!

इसका अर्थ है—

यदि वर्ग की भुजा 2a हो

तो वृत्ता की त्रिज्या $r=[a+1/3(\sqrt{2}a-a)]=[1+1/3(\sqrt{2}-1)]a$

ये क्या है?

अरे ये तो कोई गणित या विज्ञान का सूत्र लगता है

शायद ईसा के जन्म से पूर्व पिंगल के छंद शास्त्र में एक श्लोक प्रकट हुआ था। हालायुध ने अपने ग्रंथ मृतसंजीवनी में, जो पिंगल के छन्द शास्त्र पर भाष्य है,

इस श्लोक का उल्लेख किया है—

परे पूर्णमिति।

उपरिष्टादेकं चतुरस्त्रकोष्ठं लिखित्वा तस्याधस्तात् उभयतोर्धनिष्क्रान्तं कोष्ठद्वयं लिखेत्।

तस्याप्यधस्तात् त्रयं तस्याप्यधस्तात् चतुष्टयं यावदभिमतं स्थानमिति मेरुप्रस्तारः ।

तस्य प्रथमे कोष्ठे एकसंख्यां व्यवस्थाप्य लक्षणमिदं प्रवर्तयेत् ।

तत्र परे कोष्ठे यत् वृत्तसंख्याजातं तत् पूर्वकोष्ठयोः पूर्णं निवेशयेत् ।

शायद ही किसी आधुनिक शिक्षा में maths में B.Sc. किये हुए भारतीय छात्र ने इसका नाम भी सुना हो, जबकि यह 'मेरु प्रस्तार' है।

परंतु जब ये पाश्चात्य जगत से 'पास्कल त्रिभुज' के नाम से भारत आया तो उन कथित सेकुलर भारतीयों को शर्म इस बात पर आने लगी कि भारत में ऐसे सिद्धांत क्यों नहीं दिये जाते।

●

* ''**चतुराधिकं शतमष्टगुणं द्वाषष्टिस्तथा सहस्त्राणाम् ।***

अयुतद्वयस्य विष्कम्भस्यासन्नो वृज़परिणाहः ॥''

ये भी कोई पूजा का मंत्र ही लगता है, लेकिन ये किसी गोले के व्यास व परिध का अनुपात है। जब पाश्चात्य जगत से ये आया तो संक्षिप्त रूप लेकर आया, ऐसा π जिसे 22/7 के रूप में डिकोड किया जाता है।

उक्त श्लोक को डिकोड करेंगे अंकों में तो कुछ इस तरह होगा—

(100 + 4) * 8 + 62000/20000 = 3.1416

ऋगवेद में π का मान 32 अंक तक शुद्ध है।

गोपीभाग्य मधुव्रातः श्रुंगशोदधि संधिगः ।

खलजीवितखाताव गलहाला रसंधरः ॥

इस श्लोक को डीकोड करने पर 32 अंकों तक π का मान 3.1415926535897932384626433832792... आता है।

कुछ गणित के प्रमेय जो आधुनिक काल में प्रचलित हैं, पर वे संस्कृत की देन हैं—

#चक्रीय_चतुर्भुज का क्षेत्रफलः

ब्राह्मस्फुटसिद्धान्त के गणिताध्याय के क्षेत्रव्यवहार के श्लोक 12.21 में निम्नलिखित श्लोक वर्णित हैं—

स्थूल-फलम् त्रि-चतुर्-भुज-बाहु-प्रतिबाहु-योग-दल-घातस्।

भुज-योग-अर्ध-चतुष्टय-भुज-ऊन-घातात् पदम् सूक्ष्मम्॥

अर्थ :

त्रिभुज और चतुर्भुज का स्थूल (लगभग) क्षेत्रफल उसकी आमने-सामने की भुजाओं के योग के आधे के गुणनफल के बराबर होता है तथा सूक्ष्म (exact) क्षेत्रफल भुजाओं के योग के आधे में से भुजाओं की लंबाई क्रमशः घटाकर और उनका गुणा करके वर्गमूल लेने से प्राप्त होता है।

●

#ब्रह्मगुप्त_प्रमेयः

चक्रीय चतुर्भुज के विकर्ण यदि लम्बवत हों तो उनके कटान बिन्दु से किसी भुजा पर डाला गया लम्ब सामने की भुजा को समद्विभाजित करता है।

ब्रह्मगुप्त ने श्लोक में कुछ इस प्रकार अभिव्यक्त किया हैं—

त्रि-भ्जे भुजौ तु भूमिस् तद्-लम्बस् लम्बक-अधरम् खण्डम्।

ऊर्ध्वम् अवलम्ब-खण्डम् लम्बक-योग-अर्धम् अधर-ऊनम्॥

(ब्राह्मस्फुटसिद्धान्त, गणिताध्याय, क्षेत्रव्यवहार 12.31)

●

#वर्ग_समीकरण का व्यापक सूत्रः

ब्रह्मगुप्त का सूत्र इस प्रकार है—

*** वर्गचतुर्गुणितानां रुपाणां मध्यवर्गसहितानाम्।***

मूलं मध्येनोनं वर्गद्विगुणोद्धृतं मध्यः ॥

ब्राह्मस्फुट-सिद्धांत - 18.44

अर्थात :- व्यक्त रूप (c) के साथ अव्यक्त वर्ग के चतुर्गुणित गुणांक (4ac) को अव्यक्त मध्य के गुणांक के वर्ग (b^2) से सहित करें या जोड़ें। इसका वर्गमूल प्राप्त करें तथा इसमें से मध्य अर्थात b को घटावें।

पुनः इस संख्या को अज्ञात 'ञ' वर्ग के गुणांक (a) के द्विगुणित संख्या से भाग देवें।

प्राप्त संख्या ही अज्ञात 'त्र' राशि का मान है।

श्रीधराचार्य ने इस बहुमूल्य सूत्र को भास्कराचार्य का नाम लेकर अविकल रूप से उद्धृत किया—

चतुराहतवर्गसमैः रूपैः पक्षद्वयं गुणयेत्।
अव्यक्तवर्गरूपैर्युक्तौ पक्षौ ततो मूलम्॥

(भास्करीय बीजगणित, अव्यक्त-वर्गादि-समीकरण, पृ.-221)

अर्थात :

प्रथम अव्यक्त वर्ग के चतुर्गुणित रूप या गुणांक (4a) से दोनों पक्षों के गुणांकों को गुणित करके द्वितीय अव्यक्त गुणांक (b) के वर्गतुल्य रूप दोनों पक्षों में जोड़ें। पुनः द्वितीय पक्ष का वर्गमूल प्राप्त करें।☺

●

#आर्यभट्ट की ज्या (Sine) सारणी :

आर्यभटीय का निम्नांकित श्लोक ही आर्यभट की ज्या-सारणी को निरूपित करता है :

मखि भखि फखि धखि णखि ञखि ङखि हस्झ स्ककि किष्ण श्घकि किघ्व।

घ्लकि किग्र हज्य धकि किच स्ग झश ङ्व ज्ल प्त फ छ कला-अर्ध-ज्यास्॥

#माधव की ज्या सारणी :

निम्नांकित श्लोक में माधव की ज्या सारणी दिखायी गयी है। जो चन्द्रकान्त राजू द्वारा लिखित *''कल्चरल फाउण्डेशन्स ऑफ मैथमेटिक्स''* नामक पुस्तक से लिया गया है।

श्रेष्ठं नाम वरिष्ठानां हिमाद्रिर्वेदभावनः।
तपनो भानुसूक्तज्ञो मध्यमं विद्धि दोहनं।।
धिगाज्यो नाशनं कष्टं छत्रभोगाशयाम्बिका।
म्रिगाहारो नरेशोऽयं वीरोरनजयोत्सुकः।।
मूलं विशुद्धं नालस्य गानेषु विरला नराः।
अशुद्धिगुप्ताचोरश्रीः शंकुकर्णो नगेश्वरः।।
तनुजो गर्भजो मित्रं श्रीमानत्र सुखी सखे।।
शशी रात्रौ हिमाहारो वेगल्पः पथि सिन्धुरः।।
छायालयो गजो नीलो निर्मलो नास्ति सत्कुले।
रात्रौ दर्पणमभ्राङ्गं नागस्तुङ्गनखो बली।।
धीरो युवा कथालोलः पूज्यो नारीजरैर्भगः।
कन्यागारे नागवल्ली देवो विश्वस्थली भृगुः।।
तत्परादिकलान्तास्तु महाज्या माधवोदिताः।
स्वस्वपूर्वविशुद्धे तु शिष्टास्तत्खण्डमौर्विकाः।।

(2.9.5)

●

#संख्या_रेखा की परिकल्पना (कॉन्सेप्ट्) :

''एकप्रभृत्यापरार्धसंख्यास्वरूपपरिज्ञानाय रेखाध्यारोपणं कृत्वा एकेयं रेखा दशेयं, शतेयं, सहस्त्रेयं इति ग्राहयति, अवगमयति, संख्यास्वरूम, केवलं, न तु संख्यायाः रेखातत्त्वमेव।''

BrhadaranyakaAankarabhasya (4.4.25)

जिसका अर्थ है—

1 unit, 10 units, 100 units, 1000 units etc. up to parardha can be located in a number line. Now by using the number line one can do operations like addition, subtraction and so on.

ये तो कुछ नमूना हैं, जो ये दर्शाने के लिये दिया गया है कि संस्कृत ग्रंथों में केवल पूजा-पाठ या आरती के मंत्र नहीं है, बल्कि तमाम विज्ञान भरा पड़ा है।

दुर्भाग्य से कालांतर में एवं विदेशी आक्रांताओं के चलते संस्कृत का ह्रास होने के कारण हमारे पूर्वजों के ज्ञान का भावी पीढ़ी द्वारा विस्तार नहीं हो पाया और बहुत से ग्रंथ आक्रांताओं द्वारा नष्ट भ्रष्ट कर दिए गए। ❍❍❍

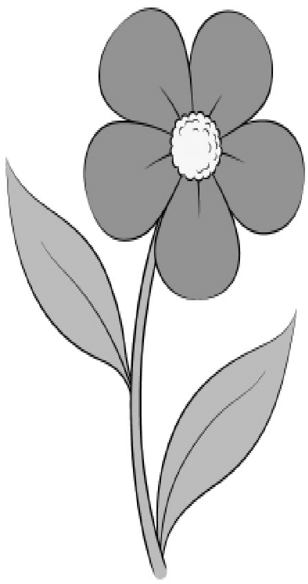

गुरूत्वाकर्षण सिद्धान्त
(Law Of Gravitation)

वेद और वैदिक आर्ष ग्रन्थों में गुरूत्वाकर्षण के नियम को समझाने के लिये पर्याप्त सूत्र हैं। परन्तु जिनको न जानकर हमारे आजकल के युवा वर्ग केवल पाश्चात्य वैज्ञानिकों के पीछे ही श्रद्धाभाव रखते हैं। जबकि यह करोड़ों वर्ष पहले वेदों में सूक्ष्म ज्ञान के रूप में ईश्वर ने हमारे लिये पहले ही वर्णन कर दिया है।

हम अनेकों प्रमाण देते हैं कि हमारे ऋषियों ने जो बात पहले ही वेदों से अपनी तपश्चर्या से जान ली थी।

आधारशक्ति : बृहत् जाबाल उपनिषद् में गुरूत्वाकर्षण सिद्धान्त को आधारशक्ति नाम से कहा गया है।

इसके दो भाग किये गये हैं—

(1) ऊर्ध्वशक्ति या ऊर्ध्वग : ऊपर की ओर खिंचकर जाना। जैसे अग्नि का ऊपर की ओर जाना।

(2) अध:शक्ति या निम्नग : नीचे की ओर खिंचकर जाना। जैसे जल का नीचे की ओर जाना या पत्थर आदि का नीचे आना।

आर्ष ग्रन्थों से प्रमाण देते हैं—

(1) यह बृहत् उपनिषद् के सूत्र हैं—

अग्नीषोमात्मकं जगत्। (बृ.उप. 2.4)

आधारशक्त्यावधृतः कालाग्निरयम् ऊर्ध्वगः। तथैव निम्नगः सोमः।

(बृ.उप. 2.8)

अर्थात :- सारा संसार अग्नि और सोम का समन्वय है। अग्नि की ऊर्ध्वगति है और सोम की अधो:शक्ति। इन दोनों शक्तियों के आकर्षण से

ही संसार रुका हुआ है।

(2) 150 ई. पूर्व महर्षि पतञ्जली ने व्याकरण महाभाष्य में भी गुरूत्वाकर्षण के सिद्धान्त का उल्लेख करते हुए लिखा—

लोष्ठः क्षिप्तो बाहुवेगं गत्वा नैव तिर्यक् गच्छति नोर्ध्वमारोहति।
पृथिवीविकारः पृथिवीमेव गच्छति आन्तर्यतः।

(महाभाष्य : स्थानेन्तरतमः, 1/1/49 सूत्र पर)

अर्थात् :- पृथ्वी की आकर्षण शक्ति इस प्रकार की है कि यदि मिट्टी का ढेला ऊपर फेंका जाता है तो वह बहुवेग को पूरा करने पर, न टेढ़ा जाता है और न ऊपर चढ़ता है। वह पृथ्वी का विकार है, इसलिये पृथ्वी पर ही आ जाता है।

(3) भास्कराचार्य द्वितीय पूर्व ने अपने सिद्धान्त शिरोमणि में यह कहा—

आकृष्टिशक्तिश्च महि तया यत्
खस्थं गुरूं स्वाभिमुखं स्वशक्त्या।
आकृष्यते तत् पततीव भाति
समे समन्तात् क्व पतत्वियं खे।।

(सिद्धान्त भुवन 16)

अर्थात :- पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है जिसके कारण वह ऊपर की भारी वस्तु को अपनी ओर खींच लेती है। वह वस्तु पृथ्वी पर गिरती हुई सी लगती है। पृथ्वी स्वयं सूर्य आदि के आकर्षण से रुकी हुई है, अतः वह निराधार आकाश में स्थित है तथा अपने स्थान से हटती नहीं है और न गिरती है। वह अपनी कील पर घूमती है।

(4) वराहमिहिर ने अपने ग्रन्थ पञ्चसिद्धान्तिका में कहा—

पंचभमहाभूतमयस्तारा गण पंजरे महीगोलः।
खेयस्कान्तान्तःस्थो लोह इवावस्थितो वृत्तः।।

(पंच.पृ. 31)

अर्थात :- तारा समूह रूपी पंजर में गोल पृथ्वी इसी प्रकार रुकी हुई है, जैसे दो बड़े चुम्बकों के बीच में लोहा।

(5) आचार्य श्रीपति ने अपने ग्रन्थ सिद्धान्तशेखर में कहा है—

उष्णत्वमर्कशिखिनोः शिशिरत्वमिन्दौ,
निर्हतुरेवमवनेः स्थितिरन्तरिक्षे ।।

(सिद्धान्त 15/21)

नभस्ययस्कान्तमहामणीनां मध्ये स्थितो लोहगुणो यथास्ते।
आधारशून्यो पि तथैव सर्वधारो धरित्र्या ध्रुवमेव गोलः ।।

(सिद्धान्त 15/22)

अर्थात :- पृथिवी की अन्तरिक्ष में स्थिति उसी प्रकार स्वाभाविक है, जैसे सूर्य में गर्मी, चन्द्र में शीतलता और वायु में गतिशीलता। दो बड़े चुम्बकों के बीच में लोहे का गोला स्थिर रहता है, उसी प्रकार पृथ्वी भी अपनी धुरी पर रुकी हुई है।

(6) ऋषि पिप्पलाद (लगभग 6000 वर्ष पूर्व) ने प्रश्न उपनिषद् में कहा—

पायूपस्थे - अपानम्।

(प्रश्न उप. 3.4)

पृथिव्यां या देवता सैषा पुरुषस्यापानमवष्टभ्यः।

(प्रश्न उप. 3.8)

तथा पृथिव्याम् अभिमानिनी या देवता... सैषा पुरुषस्य अपानवृज़िम् आकृष्य.... अपकर्षेन अनुग्रहं कुर्वती वर्तते। अन्यथा हि शरीरं गुरुत्वात् पतेत् सावकाशे वा उद्गच्छेत्। (शांकर भाष्य, प्रश्न. 3.8)

अर्थात :- अपान वायु के द्वारा ही मल मूत्र नीचे आता है। पृथ्वी अपने आकर्षण शक्ति के द्वारा ही मनुष्य को रोके हुए है, अन्यथा वह आकाश में उड़ जाता।

(7) यह ऋग्वेद के मन्त्र हैं—

यदा ते हर्य्यता हरी वावृधाते दिवेदिवे।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे।।

(ऋ. अ. 6/ अ. 1 / व. 6 / म. 3)

अर्थात :- सब लोकों का सूर्य के साथ आकर्षण और सूर्य आदि लोकों का परमेश्वर के साथ आकर्षण है। इन्द्र जो वायु , इसमें ईश्वर के रचे आकर्षण, प्रकाश और बल आदि बड़े गुण हैं। उनसे सब लोकों का दिन-दिन और क्षण-क्षण के प्रति धारण, आकर्षण और प्रकाश होता है। इस हेतु ये सब लोक अपनी-अपनी कक्षा में चलते रहते हैं, इधर-उधर विचल भी नहीं सकते।

यदा सूर्य्यममुं दिवि शुक्रं ज्योतिरधारयः।
आदित्ते विश्वा भुवनानी येमिरे।।3।।

(ऋ. अ. 6/ अ. 1 / व. 6 / म. 5)

अर्थात :- हे परमेश्वर! जब उन सूर्य्यादि लोकों को आपने रचा और आपके ही प्रकाश से प्रकाशित हो रहे हैं और आप अपने सामर्थ्य से उनका धारण कर रहे हैं, इसी कारण सूर्य और पृथ्वी आदि लोकों और अपने स्वरूप को धारण कर रहे हैं। इन सूर्य आदि लोकों का सब लोकों के साथ आकर्षण से धारण होता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि परमेश्वर सब लोकों का आकर्षण और धारण कर रहा है। ○○○

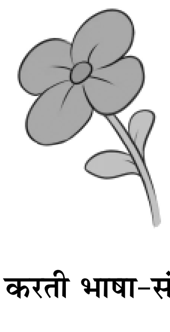

संस्कृत का जादू

संस्कृत में निम्नलिखित विशेषताएँ हैं, जो उसे अन्य सभी भाषाओं से उत्कृष्ट और विशिष्ट बनाती हैं।

1. *अनुस्वार (अं) और विसर्ग (अः) :-*

संस्कृत भाषा की सबसे महत्वपूर्ण और लाभदायक व्यवस्था है अनुस्वार और विसर्ग।

पुल्लिंग के अधिकांश शब्द विसर्गान्त होते हैं—

यथा–रामः बालकः हरिः भानुः आदि। और

नपुंसक लिंग के अधिकांश शज़्द अनुस्वारान्त होते हैं—

यथा–जलं वनं फलं पुष्पं आदि।

अब जरा ध्यान से देखें तो पता चलेगा कि विसर्ग का उच्चारण और कपालभाति प्राणायाम दोनों में श्वास को बाहर फेंका जाता है। अर्थात् जितनी बार विसर्ग का उच्चारण करेंगे उतनी बार कपालभाति प्राणायाम अनायास ही हो जाता है। जो लाभ कपालभाति प्राणायाम से होते हैं, वे केवल संस्कृत के विसर्ग उच्चारण से प्राप्त हो जाते हैं।

उसी प्रकार अनुस्वार का उच्चारण और भ्रामरी प्राणायाम एक ही क्रिया है । भ्रामरी प्राणायाम में श्वास को नासिका के द्वारा छोड़ते हुए भौंरे की तरह गुंजन करना होता है और अनुस्वार के उच्चारण में भी यही क्रिया होती है। अतः जितनी बार अनुस्वार का उच्चारण होगा, उतनी बार भ्रामरी प्राणायाम स्वतः हो जाएगा।

कपालभाति और भ्रामरी प्राणायामों से क्या लाभ है? यह बताने की आवश्यकता नहीं है; क्योंकि स्वामी रामदेव जी जैसे संतों ने सिद्ध करके सभी को बता दिया है। मैं तो केवल यह बताना चाहता हूँ कि संस्कृत बोलने

मात्र से उक्त प्राणायाम अपने आप होते रहते हैं।

जैसे हिन्दी का एक वाक्य लें-''राम फल खाता है।''

इसको संस्कृत में बोला जायेगा-रामः फलं खादति।''

राम फल खाता है, यह कहने से काम तो चल जायेगा, किन्तु रामः फलं खादति कहने से अनुस्वार और विसर्ग रूपी दो प्राणायाम हो रहे हैं। यही संस्कृत भाषा का रहस्य है।

संस्कृत भाषा में एक भी वाज़्य ऐसा नहीं होता जिसमें अनुस्वार और विसर्ग न हों। अतः कहा जा सकता है कि संस्कृत बोलना अर्थात् चलते-फिरते योग साधना करना।

2. शब्द-रूप :-

संस्कृत की दूसरी विशेषता है शब्द रूप। विश्व की सभी भाषाओं में एक शब्द का एक ही रूप होता है, जबकि संस्कृत में प्रत्येक शब्द के 25 रूप होते हैं। जैसे राम शब्द के निम्नानुसार 25 रूप बनते हैं।

यथा :- रम् (मूल धातु)
राम :- रामौ रामाः
रामं रामौ रामान्
रामेण रामाज़्यां रामैः
रामाय रामाज़्यां रामेज़्यः
रामत् रामाज़्यां रामेज़्यः
रामस्य रामयोः रामाणां
रामे रामयोः रामेषु
हे राम! हे रामौ! हे रामाः!

ये 25 रूप सांख्य दर्शन के 25 तत्वों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जिस प्रकार पच्चीस तत्वों के ज्ञान से समस्त सृष्टि का ज्ञान प्राप्त हो जाता है, वैसे ही संस्कृत के पच्चीस रूपों का प्रयोग करने से आत्म साक्षात्कार हो जाता है और इन

25 तत्वों की शक्तियाँ संस्कृतज्ञ को प्राप्त होने लगती है।

सांख्य दर्शन के 25 तत्व निम्नानुसार हैं—

आत्मा (पुरुष)
(अंत:करण 4) मन बुद्धि चित्त अहंकार
(ज्ञानेन्द्रियाँ 5) नासिका जिह्वा नेत्र त्वचा कर्ण
(कर्मेन्द्रियाँ 5) पाद हस्त उपस्थ पायु वाक्य
(तन्मात्रायें 5) गन्ध रस रूप स्पर्श शब्द
(महाभूत 5) पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश

3. द्विवचन :-

संस्कृत भाषा की तीसरी विशेषता है द्विवचन। सभी भाषाओं में एक वचन और बहुवचन होते हैं, जबकि संस्कृत में द्विवचन अतिरिक्त होता है। इस द्विवचन पर ध्यान दें तो पायेंगे कि यह द्विवचन बहुत ही उपयोगी और लाभप्रद है।

जैसे :- राम शज़्द के द्विवचन में निम्न रूप बनते हैं—रामौ, रामाभ्यां और रामयो:। इन तीनों शब्दों के उच्चारण करने से योग के क्रमश: मूलबन्ध, उड्डियान बन्ध और जालन्धर बन्ध लगते हैं, जो योग की बहुत ही महत्वपूर्ण क्रियायें हैं।

4 सन्धि :-

संस्कृत भाषा की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है सन्धि। ये संस्कृत में जब दो शब्द पास में आते हैं तो वहाँ सन्धि होने से स्वरूप और उच्चारण बदल जाता है। उस बदले हुए उच्चारण में जिह्वा आदि को कुछ विशेष प्रयत्न करना पड़ता है। ऐसे सभी प्रयत्न एक्यूप्रेशर चिकित्सा पद्धति के प्रयोग हैं।

''इति अहं जानामि'' इस वाक्य को चार प्रकार से बोला जा सकता है और हर प्रकार के उच्चारण में वाक् इन्द्रिय को विशेष प्रयत्न करना होता है।

यथा :-

1. इत्यहं जानामि।
2. अहमिति जानामि।
3. जानाम्यहमिति।
4. जानामीत्यह।

इन सभी उच्चारणों में विशेष आभ्यंतर प्रयत्न होने से एक्यूप्रेशर चिकित्सा पद्धति का सीधा प्रयोग अनायास ही हो जाता है। जिसके फलस्वरूप मन, बुद्धि सहित समस्त शरीर पूर्ण स्वस्थ एवं निरोग हो जाता है।

इन समस्त तथ्यों से सिद्ध होता है कि संस्कृत भाषा केवल विचारों के आदान-प्रदान की भाषा ही नहीं, अपितु मनुष्य के संपूर्ण विकास की कुंजी है। यह वह भाषा है, जिसके उच्चारण करने मात्र से व्यक्ति का कल्याण हो सकता है। इसीलिए इसे देवभाषा और अमृतवाणी कहते हैं। ❍❍❍

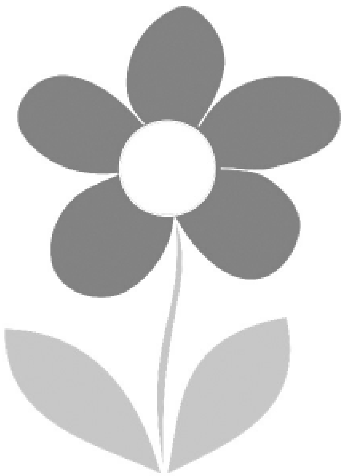

अमेरिकी पत्रिका का दावा

संस्कृत मंत्रों के उच्चारण से बढ़ती है याददाश्त

एक्सपर्ट की इस टीम ने 42 वॉलंटियर्स को चुना, जिनमें 21 प्रशिक्षित वैदिक पंडित (22 साल) थे। इन लोगों ने 7 सालों तक शुक्ल यजुर्वेद के उच्चारण में पारंगत हासिल की थी। ये सभी पंडित दिल्ली के एक वैदिक स्कूल के थे।

एक अमेरिकी पत्रिका में दावा किया गया है कि वैदिक मंत्रों को याद करने से दिमाग के उसे हिस्से में बढ़ोतरी होती है, जिसका काम संज्ञान लेना है यानी की चीजों को याद करना है। डॉ. जेम्स हार्टजेल नाम के न्यूरो साइंटिस्ट के इस शोध को साइंटिफिक अमेरिकन नाम के जरनल ने प्रकाशित किया है। न्यूरो साइंटिस्ट डॉ. हार्टजेल ने अपने शोध के बाद 'द संस्कृति इफेक्ट' नाम का टर्म तैयार किया है। वह अपने रिपोर्ट में लिखते हैं कि भारतीय मान्यता यह कहती है कि वैदिक मंत्रों का लगातार उच्चारण करने और उसे याद करने की कोशिश से याददाश्त और सोच बढ़ती है। इस धारणा की जांच के लिए डॉ. जेम्स और इटली के ट्रेन्टो यूनिवर्सिटी के उनके साथी ने भारत स्थित नेशनल ब्रेन रिसर्च सेंटर के डॉ. तन्मय नाथ और डॉ. नंदिनी चटर्जी के साथ टीम बनाई।

'द हिन्दू' में छपी रिपोर्ट के मुताबिक एक्सपर्ट की इस टीम ने 42 वॉलंटियर्स को चुना, जिनमें 21 प्रशिक्षित वैदिक पंडित (22 साल) थे।

इन लोगों ने 7 सालों तक शुक्ल यजुर्वेद के उच्चारण में पारंगत हासिल की थी। ये सभी पंडित दिल्ली के एक वैदिक स्कूल के थे। जबकि एक कॉलेज के छात्रों में 21 को संस्कृत उच्चारण के लिए चुना गया। इस टीम ने इन सभी 42 प्रतिभागियों के ब्रेन की मैपिंग की। इसके लिए आधुनिक तकनीक का इस्तेमाल किया गया। नेशनल ब्रेन रिसर्च सेंटर के पास मौजूद इस तकनीक से दिमाग के अलग-अलग हिस्सों का आकार की जानकारी ली जा सकती है।

टीम ने जब 21 पंडितों और 21 दूसरे वालंटियर्स के ब्रेन की मैपिंग की तो दोनों में काफी अंतर पाया गया। उन्होंने पाया कि वे छात्र जो संस्कृत उच्चारण में पारंगत थे, उनके दिमाग का वो हिस्सा जहां से याददाश्त, भावनाएं, निर्णय लेने की क्षमता नियंत्रित होती है, वो ज्यादा सघन था। इसमें ज्यादा अहम बात यह है कि दिमाग की संरचना में ये परिवर्तन तात्कालिक नहीं थे बल्कि वैज्ञानिकों के मुताबिक जो छात्र वैदिक मंत्रों के उच्चारण में पारंगत थे, उनमें बदलाव लंबे समय तक रहने वाले थे। इसका मतलब यह है कि संस्कृत में प्रशिक्षित छात्रों की याददाश्त, निर्णय लेने की क्षमता, अनुभूति की क्षमता लंबे समय तक कायम रहने वाली थी। ○○○

(साभार, जनसत्ता ऑनलाइन 14-01-2018)

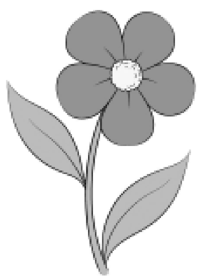

आर्य भाषा की लिपि देवनागरी

आर्य भाषा की लिपि देवनागरी है। देवनागरी को देवनागरी इसलिए कहा गया है, क्यूँकि यह देवों की भाषा है। भाषाएँ दो प्रकार की होती है।

(1) कल्पित और

(2) अपौरुषेय (ईश्वरीय वैज्ञानिक)

कल्पित भाषा का आधार कल्पना के अतिरिक्त और कोई नहीं होता। ऐसी भाषा में वर्णरचना का आधार भी वैज्ञानिक के स्थान पर काल्पनिक होता है।

अपौरुषेय भाषा का आधार नित्य अनादि वाणी होता है। उसमें समय समय पर परिवर्तन होते रहते हैं, परन्तु वह अपना मूल आधार अनादि अपौरुषेय वाणी को कभी नहीं छोड़ती। ऐसी भाषा का आधार भी अनादि विज्ञान ही होता है।

वैदिक वर्णमाला में मुख्यत: 17 अक्षर है। इन 17 अक्षरों में कितने अक्षर केवल प्रयत्नशील अर्थात् मुख और जिव्हा की इधर-उधर गति आकुंचन और प्रसारण से बोले जाते हैं और किसी विशेष स्थान से इनका कोई संबंध नहीं होता। उन्हें स्वर कहते है।

जिनके उच्चारण में स्वर और प्रयत्न दोनों की सहायता लेनी पड़ती है, उन्हें व्यंजन कहते हैं।

कितने ही अवांतर भेद हो जाने पर हमारी इस वर्णमाला के अक्षर 64 हो जाते है। यजुर्वेद में इन्हीं 17 अक्षरों की नीचे के मंत्र द्वारा स्पष्ट गणना है—

''अग्निरेकाक्षरेण, अश्विनौ द्वयक्षरेण, विष्णुः त्र्यक्षरेण, सोमश्चतुरक्षेण, पूषा पंचाक्षरेण, सविता षड्क्षरेण, मरुतः सप्ताक्षरेण, बृहस्पति अष्टाक्षरेण,

मित्रो नवाक्षरेण, वरुणो दशाक्षरेण, इन्द्र एकादशाक्षरेण, विश्वदेवा द्वादशाक्षरेण, वसवस्त्रयोदशाक्षरेण, रुद्रश्चतुर्दशाक्षरेण, आदित्या: पंचदशाक्षरेण, अदिति: षोड्शाक्षरेण, प्रजापति: सप्तदशाक्षरेण।''

(यजुर्वेद 9-31-34)

इस प्रकार यह मूलरूप से 17 अक्षरों की वर्णमाला वैदिक होने से अनादि और अपौरुषेय है। वर्णमाला के 17 अक्षरों का मूल एक ही अकार है। यह अकार ही अपने स्थान और प्रयत्नों के भेद से अनेक प्रकार का हो जाता है। ओष्ठ बंद करके यदि अकार का उच्चारण किया जाए तो पकार हो जाएगा और यदि अकार का ही कंठ से उच्चारण करें तो ककार सुनाई देगा। इस प्रकार से सभी वर्णों के विषय में समझ लेना चाहिये। अकार प्रत्येक उच्चारण में उपस्थित रहता है, बिना उसकी सहायता के न कोई वर्ण भलीभांति बोला जा सकता है और न सुनाई देता है। इसलिए अकार के निम्न अनेक अर्थ है—

''सब, कुल, पूर्ण, व्यापक, अव्यय, एक और अखंड आदि अकार अक्षर के ही अर्थ है। इन अर्थों को देखकर अकार अक्षर व्यापक और अखंड प्रतीत होता है। क्यूँकि शेष अक्षर उसी में प्रविष्ट होने से इन्हीं के रूप में ही प्रतीत होते है। उपनिषद् में ब्राह्मण कम् और खम् दो अर्थ है। इसलिए इस अपौरुषेय वर्णमाला का उच्चारण करते समय हम एक प्रकार से ब्रह्म की उपासना कर रहे होते हैं। वर्णों के शब्द बनते हैं और शब्दों का समुदाय भाषा है। इस प्रकार से हिंदी भाषा को 'ब्रह्मवादिनी' भी कह सकते है।''

इस प्रकार देवनागरी लिपि में प्रत्येक अक्षर का उच्चारण करते समय हम ब्रह्म की उपासना कर रहे होते हैं। इसलिए देवनागरी हमारी संस्कृति का प्रतीक है। हमारी संस्कृति वैदिक है। वैदिक संस्कृति वेद द्वारा भगवान की देन है और वेदों के अनादि होने से हमारी संस्कृति और हमारी भाषा भी अनादि और अपौरुषेय है। एक और तथ्य यह है कि हमारी भाषा में सभी

भाषाओं के शब्द लिखे और पढ़े जा सकते हैं, क्यूँकि इसके 64 अक्षर किसी भी शब्द की तथा उच्चारण की किसी भी न्यूनता को रहने नहीं देते।

देवनागरी लिपि के विकास की जहाँ तक बात है तो स्वामी दयानंद पूना प्रवचन के नौवें प्रवचन में लिखते हैं कि इक्ष्वाकु आर्यावर्त का प्रथम राजा हुआ। इक्ष्वाकु के समय अक्षर स्याही आदि से लिखने की लिपि का विकास किया। ऐसा प्रतीत होता है कि इक्ष्वाकु के समय वेद को कंठस्थ करने की रीती कुछ कम होने लगी थी। जिस लिपि में वेद लिखे गए उसका नाम देवनागरी है। विद्वान अर्थात् देव लोगों ने संकेत से अक्षर लिखना प्रारंभ किया, इसलिए भी इसका नाम देवनागरी है।

इस प्रकार से आर्य भाषा अपौरुषेय एवं वैदिक काल की भाषा है जिसकी लिपि का विकास भी वैदिक काल में हो गया था।

- **सन्दर्भ-उपदेश मंजरी-स्वामी दयानंद पूना प्रवचन एवं स्वामी आत्मानंद सरस्वती पत्र व्यवहार-209**

पुरानी भाषा कौन-सी संस्कृत या पाली

आज बात करते हैं पाली भाषा पर। पहले आपको बता दूँ कि इस भाषा का विकास बहुत बाद में हुआ था।

एक लेखक ने संस्कृत को नवीन भाषा बताया, उसका आधार उसने शिलालेख आदि बताये। लेकिन यह आधार अयुक्त है, क्यूँकि प्राकृत भाषा लोक भाषा थी जब यह शिलालेख आदि लिखे गये थे, जबकि संस्कृत केवल कुछ विद्वान लोगों की भाषा थी।

शिलालेख आदि का संदेश आमजन को कोई सूचना या राज्य की परियोजना अथवा कोई संदेश के लिए होता था। आमजन के लिए उन्हीं की समझने लायक भाषा में ही संदेश लिखा जाएगा। जैसे आज हिंदी का प्रचलन है तो कोई भी सरकारी घोषणा संस्कृत में नही दी जायेगी बल्कि हिंदी में ही दी जायेगी। इस बात का प्रबल प्रमाण एक जैन लेखक के द्वारा मिलता है जिससे सिद्ध होता है कि प्राकृत बुद्ध, महावीर के समय की सामान्य जन की भाषा थी—

जैन आचार्य हरीभद्र सूरी दशवेकालीक टीका की भूमिका 101 पर लिखता है—

''बाल स्त्री मूढ़ मूर्खाणा मूणा चारित्रकांगक्षिणाम।
अनुग्रहार्थ तत्वज्ञः सिद्धांतः प्राकृतः स्मृतः:॥''

अर्थात् बाल, मूढ़, मूर्ख के लिए जैन सिद्धांत प्राकृत में दिया गया। इससे सिद्ध है कि संस्कृत भाषा भी महावीर आदि के समय थी। महावीर का काल चन्द्रगुप्त से पुराना मानना होगा, क्यूँकि तथाकथित इतिहासकार

उसे चन्द्रगुप्त का जैन बनना मानते हैं। यदि इसे न माने तो अशोक का चौथा उत्तराधिकारी शालीशुक मौर्य जैन था। इससे जैन मत इससे भी प्राचीन सिद्ध होता है। अत: संस्कृत की प्राचीनता हरीभद्र अनुसार शालिशुक से पुरानी तो हो ही जाती है।

संस्कृत में ग्रन्थ लेखन का ही कार्य होता था। ग्रंथों को भोजपत्र या ताड़पत्र पर लिखा जाता था जिसका काल अधिक नहीं होता था। अधिक से अधिक 100 वर्ष के अंदर वो नष्ट हो जाता था। उसकी पुनरावृत्ति दूसरे ताड़ या भोज पत्र पर हो जाती थी। इस तरह नया संस्करण निकाल पुराने ग्रंथों के वचन सुरक्षित रखे जाते थे। आज जो पांडूलिपि मिलती है वो ग्रन्थ के वास्तविक काल की न हो उसके अंत के संस्करणों की है। आज की अच्छी क्वालिटी का कागज भी 60-70 साल में टूट-टूट कर नष्ट हो जाता है। इसलिए पांडूलिपि, शिलालेख यह वास्तविक आधार नहीं, बल्कि यह जानने का है कि कौन-सी भाषा प्राचीन है।

इसका आधार है उस भाषा में लिखे विभिन्न व्याकरण ग्रन्थ जिनमें उसके शब्द विकार, शब्द सिद्धि दर्शायी जाती है।

प्राकृत के अध्ययन हेतु निम्न सामग्री है—

भरत का नाट्य शास्त्र :

भरत मुनि का उल्लेख महाभारत में होने से तथा भरत मुनि द्वारा प्राकृत सूत्र दिए जाने से प्राकृत का काल भी महाभारत समकक्ष तो बैठता ही है।

कोहल-मार्कण्डेय कवीन्द्र के अनुसार कोहल के ग्रन्थ में भी प्राकृत का उल्लेख है।

वाल्मीकि सूत्र : यह प्राकृत भाषा के व्याकरण के सूत्र है। इन पर अप्पय दीक्षित की व्याख्या है, यह वाल्मीकि जी की रचना है। इससे यह संभव है प्राकृत भी तथाकथित मूल निवासियों की भाषा नहीं बल्कि आर्यों की ही भाषा है।

शाकल्य : यह ऋग्वेद के एक शाखा के रचेयिता है तथा प्राचीन ऋषि हैं। मार्कंड कवीन्द्र के अनुसार शाकल्य ऋषि प्राकृत पर लिखे हैं।

लगभग त्रेताकाल से दोनों भाषाएं चली है संस्कृत और प्राकृत।

वररुचिकृत प्राकृत लक्षण : यह प्राकृत अध्ययन में सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें भामह व्याख्या भी है। भामाह विक्रम संवत् पूर्व के आसपास था।

प्राकृतदीपिका : यह अभिनव गुप्त द्वारा लिखा ग्रन्थ है।

चंडकृत प्राकृत लक्षण : इसमें महाराष्ट्र तथा जैन प्राकृतों का वर्णन है।

हेमचन्द्र का प्राकृत व्याकरण : यह प्राकृत के शब्दानुशासन का ग्रन्थ है।

प्राकृत पिंगल : इसमें प्राकृत के पद्यों और छन्दों का संग्रह है।

यह सब प्राकृत के जान्ने के ग्रन्थ है। इन सबसे एक निष्कर्ष निकलता है कि संस्कृत में किसी शब्द सिद्धि संस्कृत धातु से प्रत्यय उपसर्ग से ही हो जाती है। अर्थात् संस्कृत में किसी अन्य भाषा से कोई शब्द उधार नहीं लिया लेकिन आगे जब इन प्राकृत व्याकरण ग्रंथों के प्रमाण देखोगे तो पता चलेगा कि संस्कृत के कई अपभ्रंश इस भाषा में लिए गये हैं। अपभ्रंष कहलाता है एक भाषा के शुद्ध रूप का बिगड़ कर अन्य भाषा में प्रयुक्त होना। इससे अपभ्रंश प्रयोग वाली भाषा आत्मजा और शुद्ध प्रयोग वाली जनक सिद्ध हो जाती है।

अब प्राकृत के सामान्य नियम समझिये —

प्राकृत में तीन प्रकार के शब्द प्रयोग किए गये है—

समान शब्द विभ्रष्ट देशीगतथापि च—भरतनाट्य शास्त्र 17/3

अर्थात् समान, विभ्रष्ट और देशी पद प्राकृत में है।

इसी पर हरिपाल कृत टीका में लिखा है—

''तद्भवः तत्समो देशी त्रिविधः प्राकृतकमः'' अर्थात् संस्कृत के

सदृश्य, संस्कृत से विकृत और देशी यह तीन प्रकार के शब्द प्राकृत में है।

जैन आचार्य हेमचन्द्र अभिधान चिंतामणि की स्वोपज्ञ टीका में इस बात के प्रमाण देता है कि प्राकृत में प्रयुक्त देशज शब्द भी संस्कृत से आये है—

गोसो देश्याम। संस्कृतेऽपि
तुंगी देश्याम। संस्कृतेऽपि

अब संस्कृत के तत्सम का प्राकृत में किस तरह विकार हो तद्भव होता है, यह निम्न नियम से पाया जाता है—

''ए ओ आर पराणि अ अं आरपरं अ पाअए णत्थि।
व स आर मज्झिमाइ अ क च वग्ग तवग्ग णिहणाइ॥''

अर्थात ए ओकार से परे अर्थात ऐ औ अंकार के परे अर्थात् विसर्ग नहीं होता अर्थात् संस्कृत में आये विसर्ग का प्राकृत में लोप हो जाता है। व सकार के मध्य के श ष वर्ण तथा क च त वर्गो के निधनानि ङ ञ न का भी प्राकृत में लोप कर देते हैं।

यहाँ स्पष्ट पता चल रहा है कि प्राकृत संस्कृत के कुछ शब्द को तद्भव कर बनाई गयी भाषा है अर्थात् इसके शब्द संस्कृत से उधार लिए गये हैं।

साहित्य रत्नाकार नामक ग्रन्थ में निम्न श्लोक मिलता है, जिससे पता चलता है कि किन-किन वर्णों को लुप्त कर प्राकृत वर्णमाला रची—

ऐ औ कं कः ऋ ॠ (दीर्घ स्वर में) लृ लॄ (दीर्घ) प्लुप्त श षा बिंदुश्चतुर्थी क्वचित।
प्रान्ते न क्ष डं ञा पृथग द्विवचन नाष्टादश प्राकृते।
रूपञ्चापि यदातमेपदकृत यद्वा परस्मैपद्म।
भेदों नैव तयोर्न लिंगनियमस्तार्द्दयथा संस्कृते॥

अर्थात ऐ औ कं कः ऋकार लृकार प्लुत श ष अ बिंदु तथा 4 विभक्ति प्रांत में न क्ष ङ ञ और द्विवचन यह 18 प्राकृत में नहीं रहे।

यहाँ भी संस्कृत से प्राकृत का बनना बताया जा रहा है।

प्राकृत पैंगल में उग्गाह छंद में निम्नलिखित गाथा है—

''एऔ अं म ल पुरऔ सआर, पुब्बेहि बे बि वण्णाई।
कच्चबग्गे अन्ता दहबणा पाउए ण हूअति॥''

ए ओ अं म ल के अगले वर्ण ऐ औ : य व स से पहले दो वर्ण श ष तथा क वर्ग और त वर्ग के अंतिम वर्ण ङ ण ञ प्राकृत में नहीं होते। अर्थात् प्राकृत में इनका लोप हो जाता है।

संस्कृत से बदलाव लाने के अलावा भी प्राकृत का सिलसिला यहीं न रुका। यह भाषा बार-बार बदल बदल नये-नये रूप में आती गयी। पहले शौरसेनी प्राकृत हुई फिर मागधी में हुआ।

मागधी में संस्कृत के स के स्थान पर श कर कुछ शज़्द बना लिए गये— जैसे सामवेद से शामवेद इस पर नामिसाधू श्लोक 12 में व्याख्यात है— **''रसयोर्लशौ मागधिकायाम''।**

अर्थात् र के स्थान पर ल और स के स्थान पर श अर्थात् संस्कृत में पुरुष शब्द ष का ल विकार हो माधवी प्राकृत में—पुलिस हो गयी। इसी तरह फिर अर्धमागधी प्राकृत हुई। इसके बाद जैन में श्वेताम्बर संप्रदाय की प्राकृत का प्रचलन हुआ, इसे महाराष्ट्री भी कहते हैं। रामदासकृत सेतुबंध टीका में लिखा है—''महाराष्ट्रभाषाया बहुवचनेऽप्येकवचन प्रयोगात। पृष्ठ-174 तथाच—युद्ध = जुज्झ (सेतुबंध पृष्ठ-502)।

यहाँ उदाहरण देकर बताया है कि संस्कृत के युद्ध का महाराष्ट्री प्राकृत में किस तरह रूपान्तर हुआ।

अश्वघोष के दो नाटकों के त्रुटीयुक्त पत्ते चीन में प्राप्त हुए हैं। अध्यापक लूडर्स (जर्मन) ने उन्हें जोड़ कर एक लेख लिखा—जिसका अनुवाद श्रीमती तुहिनिका चैटर्जी ने किया।

पेज 40 पर लूडर्स लिखता है—"we can distinguish clearly at least three dialects."

अर्थात् प्राकृत की तीन बोलिया अश्वगोष के काव्य में है।

यहाँ स्पष्ट है कि पहले संस्कृत से विकार पाकर यह भाषा बनी, फिर कुछ शब्दों में और विकार हुआ और अंत में विकार प्राप्त होकर काफी भेद इस भाषा में हुआ। जबकि संस्कृत भाषा के किसी भी प्राचीन संस्कृत व्याकरण में ऐसा कोई नियम नहीं मिलता कि अमुक वर्ण अमुक भाषा के वर्ण से इस भाषा में लिया गया या अमुक भाषा के तत्सम से तद्भव हुआ। संस्कृत में लौकिक में अगर कुछ विकार देखा जाता है तो व्याकरण कार उसे वैदिक (वैदिक वाक्-वैदिक संस्कृत) से बताते हैं न कि प्राकृत, पाली भाषा से जबकि प्राकृत में बहुधा उदाहरण मिल जायेंगे संस्कृत के तत्सम के तद्भव रूप में। अतः प्राकृत से संस्कृत नहीं, संस्कृत से प्राकृत बनी है। यह तथाकथित मूलनिवासी भाषा नहीं बल्कि ब्राह्मण, द्विज से लेकर आर्य शुद्र तक इसे प्रयोग करते थे, क्यूँकि बौद्ध के प्रमाण में प्रत्येक 28 बुद्ध द्विज (ब्रह्म ज्ञानी, एवं वेद वेत्ता) ही था, कोई भी कथित मंदबुद्धि मूलनिवासी नहीं था। उन्होंने इस भाषा का प्रयोग कर उनके अनुयायी बौधिधर्म अरिहंत आदि बड़े-बड़े बौद्ध भी द्विज वर्ण (ब्रह्म ज्ञानी, वेद वेत्ता) से ही थे। इसलिए प्राकृत और संस्कृत दोनों आर्यों की ही भाषा है। इस भाषा के नाम पर लोगों को आपस में पागल बनाने, इतिहास मोड़ने, भावनाएं आहत करने, जान-बूझकर नीचा दिखाने, दो पक्षों को लड़वाने का कार्य अम्बेडकरवादी कर रहे हैं।

राजीव मल्होत्रा अपनी पुस्तक ''द बैटल फॉर संस्कृत'' में लिखते हैं—

''बुद्ध से 2000 साल पहले 'इंडस सरस्वती सिविलाईजेशन' थी, जिनकी लिपि भी थी। कई साहित्य इनके समय में लिखा गया है। अतः यह बात बिल्कुल निरर्थक है कि बौद्ध धर्म के आने के बाद भारत में लेखन की शुरुआत हुई।''

कई वैदिक और बौद्ध ग्रंथ भी संस्कृत में ही लिखे गए, बाद में पाली

में भी लिखे गए हैं।

इसमें एक तथ्यपूर्ण बाद यह भी है कि यदि ''पाली भाषा का इतिहास पढ़ा जाए तो पता चलता है कि यह बुद्ध के काफी बाद में विकसित हुई है। अत: बुद्ध के प्रवचन पाली में नहीं थे बल्कि बाद में लोगों ने उन्हें पाली में लिखा है। कई लोगों का मत यह भी है कि बुद्ध के काफी प्रवचन संस्कृत में ही थे।

अगर सामान्य बुद्धि से भी सोचे तो यदि संस्कृत प्राकृतिक से बनी होती तो एक ही प्राकृतिक रूप से अनेक अर्थो वाले संस्कृत शब्द न होते।

संस्कृत आज नासा द्वारा भी सबसे वैज्ञानिक भाषा सिद्ध हुए और UNO ने दुनिया की 97 प्रतिशत भाषा को संस्कृत से प्रभावित माना है। यह अपुरुषेय भाषा वैज्ञानिक होने से अति प्राचीन और अद्भुत भी है। ❍❍❍

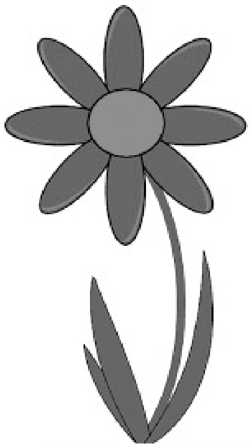

संस्कृत ज्ञान-विज्ञान की भाषा

शास्त्री प्रवीण त्रिपाठी ने एक सुंदर आलेख पोस्ट किया था संस्कृत के संदर्भ में, उन्होंने कहा—

''संस्कृत हजारों वर्ष से इस देश की राष्ट्रभाषा रही हैं। यहाँ का समस्त साहित्य संस्कृतमय है। यहां के निवासी की क्रिया-कलाप की यही भाषा है। इस देश की सभ्यता एवं संस्कृति की पवित्रधारा इसी भाषा में निरंतर जो बहती रही हो, वह भाषा इस देश में कदापि मृत नहीं हो सकती।

अंग्रेजी शिक्षण व्यवस्था से सदा के लिए इस संपूर्ण वैज्ञानिक भाषा की उपेक्षा की गयी, जैसे अपने बेटे द्वारा माँ का परित्याग हुआ हो। फिर भी इस देश में समय-समय पर भारत माँ के सपूत ने जन्म लिया और इसके महत्व को समझाया और आज तो यह हो गया है कि पूरे विश्व ने इसको मान लिया।''

संसार की समस्त प्राचीनतम भाषाओं में संस्कृत का सर्वोच्च स्थान है। विश्व-साहित्य की प्रथम पुस्तक ऋग्वेद संस्कृत में ही रची गई है। संपूर्ण भारतीय संस्कृति, परंपरा और महत्वपूर्ण राज इसमें निहित है। अमरभाषा या देववाणी संस्कृत को जाने बिना भारतीय संस्कृति की महत्ता को जाना नहीं जा सकता।

देश-विदेश के कई बड़े विद्वान संस्कृत के अनुपम और विपुल साहित्य को देखकर चकित रह गए हैं। कई विशेषज्ञों ने वैज्ञानिक रीति से इसका अध्ययन किया और गहरी गवेषणा की है। समस्त भारतीय भाषाओं को जोड़ने वाली कड़ी यदि कोई भाषा है तो वह संस्कृत ही है।

संस्कृत साहित्य का महत्व

विश्व भर की समस्त प्राचीन भाषाओं में संस्कृत का सर्वप्रथम और उच्च स्थान है। विश्व-साहित्य की पहली पुस्तक ऋग्वेद इसी भाषा का देदीप्यमान रत्न है। संस्कृत का अध्ययन किये बिना भारतीय संस्कृति का पूर्ण ज्ञान कभी संभव नहीं है।

अनेक प्राचीन एवं अर्वाचीन भाषाओं की यह जननी है। आज भी भारत की समस्त भाषाएँ इसी वात्सल्यमयी जननी के स्तन्यामृत से पुष्टि पा रही हैं।

ऋग्वेद संहिता : सबसे पुराना ग्रंथ

ऋग्वेदसंहिता के कतिपय मंडलों की भाषा संस्कृतवाणी का सर्व प्राचीन उपलब्ध स्वरूप है। ऋग्वेद संहिता इस भाषा का पुरातनतम ग्रंथ है। यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि ऋग्वेद संहिता केवल संस्कृत भाषा का प्राचीनतम ग्रंथ नहीं है, अपितु वह आर्य जाति की संपूर्ण ग्रंथराशि में भी प्राचीनतम ग्रंथ है। ऋग्वेदकाल से लेकर आज तक उस भाषा की अखंड परंपरा चली आ रही है। ऋक्संहिता केवल भारतीय की ही अमूल्य निधि नहीं है-वह समग्र आर्यजाति की, समस्त विश्ववाङ्मय की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विरासत है।

भारत के वैदिक ऋषियों और विद्वानों ने अपने वैदिक वाङ्मय को मौखिक और श्रुति परंपरा द्वारा प्राचीनतम रूप में अत्यंत सावधानी के साथ सुरक्षित और अधिकृत बनाए रखा। किसी प्रकार के ध्वनिपरक, मात्रापरक यहाँ तक कि स्वर (ऐक्सेंट) परक परिवर्तन से पूर्णत: बचाते रहने का नि:स्वार्थभाव में वैदिक वेदपाठी सहस्त्रब्दियों तक अथक प्रयास करते रहे। 'वेद' शब्द से मंत्रभाग (संहिता भाग) और 'ब्राह्मण' का बोध माना जाता था। 'ब्राह्मण' भाग के तीन अंश - (1) ब्राह्मण, (2) अरण्यक और (3)

उपनिषद् कहे गए हैं। लिपिकला के विकास से पूर्व मौखिक परंपरा द्वारा वेदपाठियों ने इनका संरक्षण किया। बहुत से वैदिक वाङ्मय धीरे-धीरे लुप्त हो गया है, किंतु आज भी जितना उपलब्ध है उसका महत्व असीम है। भारतीय दृष्टि से वेद को अपौरुषेय माना गया है। कहा जाता है मंत्रद्रष्टा ऋषियों ने मंत्रों का साक्षात्कार किया। आधुनिक जगत् इसे स्वीकार नहीं करता। फिर भी यह माना जाता है कि वेदव्यास ने वैदिक मंत्रों का संकलन करते हुए संहिताओं के रूप में उन्हें प्रतिष्ठित किया। अत: संपूर्ण भारतीय संस्कृति वेदव्यास की युग-युग तक ऋणी बनी रहेगी।

वेद-वेदांग-उपवेद

यहाँ साहित्य शब्द का प्रयोग 'वाङ्मय' के लिए है। ऊपर वेद संहिताओं का उल्लेख हुआ है। वेद चार हैं-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। इनकी अनेक शाखाएँ थीं जिनमें बहुत सी लुप्त हो चुकी हैं और कुछ सुरक्षित बच गई हैं जिनके संहिता ग्रंथ हमें आज उपलज्ध हैं। इन्हीं की शाखाओं से संबद्ध ब्राह्मण, अरण्यक और उपनिषद् नामक ग्रंथों का विशाल वाङ्मय प्राप्त है। वेदांगों में सर्वप्रमुख कल्पसूत्र हैं जिनके अवांतर वर्गों के रूप में और सूत्र, गृह्यसूत्र और धर्मसूत्र (शुल्बसूत्र भी है) का भी व्यापक साहित्य बचा हुआ है। इन्हीं की व्याख्या के रूप में समयानुसार धर्म संहिताओं और स्मृति ग्रंथों का जो प्रचुर वाङ्मय बना, मनुस्मृति का उनमें प्रमुख स्थान है। वेदांगों में शिक्षा-प्रातिशाख्य, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, छंद शास्त्र से संबद्ध ग्रंथों का वैदिकोत्तर काल से निर्माण होता रहा है। अब तक इन सबका विशाल साहित्य उपलब्ध है। आज ज्योतिष की तीन शाखाएँ-गणित, सिद्धांत और फलित विकसित हो चुकी हैं और भारतीय गणितज्ञों की विश्व की बहुत सी मौलिक देन हैं। पाणिनि और उनसे पूर्वकालीन तथा परवर्ती वैयाकरणों द्वारा जाने कितने व्याकरणों की रचना हुई, जिनमें पाणिनि का

व्याकरण-संप्रदाय 2500 वर्षों से प्रतिष्ठित माना गया और आज विश्व भर में उसकी महिमामान्य हो चुकी है। पाणिनीय व्याकरण को त्रिमुनि व्याकरण भी कहते हैं। पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि इन तीन मुनियों के सत्प्रयास से यह व्याकरण पूर्णता को प्राप्त किया। यास्क का निरुक्त पाणिनि से पूर्वकाल का ग्रंथ है और उससे भी पहले निरुक्ति विद्या के अनेक आचार्य प्रसिद्ध हो चुके थे। शिक्षा प्रातिशाख्य ग्रंथों में कदाचित् ध्वनि विज्ञान, शास्त्र आदि का जितना प्राचीन और वैज्ञानिक विवेचन भारत की संस्कृत भाषा में हुआ है, वह अतुलनीय और आश्चर्यकारी है। उपवेद के रूप में चिकित्सा विज्ञान के रूप में आयुर्वेद विद्या का वैदिकाल से ही प्रचार था और उसके पंडिताग्रंथ (चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता आदि) प्राचीन भारतीय मनीषा के वैज्ञानिक अध्ययन की विस्मयकारी निधि है। इस विद्या के भी विशाल वाङ्‌मय का कालांतर में निर्माण हुआ। इसी प्रकार धनुर्वेद और राजनीति, गांधर्ववेद आदि को उपवेद कहा गया है तथा इनके विषय को लेकर ग्रंथ के रूप में अथवा प्रसंगतिर्गत सन्दर्भों में पर्याप्त विचार मिलता है।

दर्शनशास्त्र

वेद, वेदांग, उपवेद आदि के अतिरिक्त संस्कृत वाङ्‌मय में दर्शनशास्त्र का वाङ्‌मय भी अत्यंत विशाल है। पूर्व मीमांसा, उत्तर मीमांसा, सांख्य, योग, वैशेषिक और न्याय-इन छह प्रमुख आस्तिक दर्शनों के अतिरिक्त पचासों से अधिक आस्तिक-नास्तिक दर्शनों के नाम तथा उनके वाङ्‌मय उपलब्ध हैं जिनमें आत्मा, परमात्मा, जीवन, जगत्पदार्थ मीमांसा, तत्व मीमांसा आदि के सन्दर्भ में अत्यंत प्रौढ़ विचार हुआ है। आस्तिक षड्दर्शनों के प्रवर्तक आचार्यों के रूप में व्यास, जैमिनि, कपिल, पतंजलि, कणाद, गौतम आदि के नाम संस्कृत साहित्य में अमर हैं। अन्य आस्तिक दर्शनों में शैव, वैष्णव, तांत्रिक आदि सैकड़ों दर्शन आते हैं। आस्तिकेतर दर्शनों में बौद्ध दर्शनों, जैन

दर्शनों आदि के संस्कृत ग्रंथ बड़े ही प्रौढ़ और मौलिक हैं। इनमें गंभीर विवेचन हुआ है तथा उनकी विपुल ग्रंथ राशि आज भी उपलब्ध है। चार्वाक, लोकायतिक, गार्हपत्य आदि नास्तिक दर्शनों का उल्लेख भी मिलता है। वेद प्रामण्य को मानने वाले आस्तिक और तदितर नास्तिक के आचार्यों और मनीषियों ने अत्यंत प्रचुर मात्रा में दार्शनिक वाङ्मय का निर्माण किया है। दर्शन सूत्र के टीकाकार के रूप में परमादृत शंकराचार्य का नाम संस्कृत साहित्य में अमर है।

लौकिक साहित्य

कौटिल्य का अर्थशास्त्र, वात्स्यायन का कामसूत्र, भरत का नाट्य शास्त्र आदि संस्कृत के कुछ ऐसे अमूल्य ग्रंथरत्न हैं – जिनका समस्त संसार के प्राचीन वाङ्मय में स्थान है। श्रीमद्भगवद्गीता का संसार में कहा जाता है – बाईबिल के बाद सर्वाधिक प्रचार है तथा विश्व की उत्कृष्टतम कृतियों में उसका उच्च और अन्यतम स्थान है।

वैदिक वाङ्मय के अनंतर सांस्कृतिक दृष्टि से वाल्मीकि के रामायण और व्यास के महाभारत की भारत में सर्वोच्च प्रतिष्ठा मानी गई है। महाभारत का आज उपलब्ध स्वरूप एक लाख पद्यों का है। प्राचीन भारत की पौराणिक गाथाओं, समाजशास्त्रीय मान्यताओं, दार्शनिक आध्यात्मिक दृष्टियों, मिथकों, भारतीय ऐतिहासिक जीवन चित्रों आदि के साथ-साथ पौराणिक इतिहास, भूगोल और परंपरा का महाभारत महाकोश है। वाल्मीकि रामायण आद्य लौकिक महाकाव्य है। उसकी गणना आज भी विश्व के उच्चतम काव्यों में की जाती है। इनके अतिरिक्त अष्टादश पुराणों और उपपुराणादिकों का महाविशाल वाङ्मय है जिनमें पौराणिक या मिथकीय पद्धति से केवल आर्यों का ही नहीं, भारत की समस्त जनता और जातियों का सांस्कृतिक इतिहास अनुबद्ध है। इन पुराणकार मनीषियों

ने भारत और भारत के बाहर से आयात सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक ऐक्य की प्रतिष्ठा का सहस्राब्दियों तक सफल प्रयास करते हुए भारतीय संस्कृति को एकसूत्रता में आबद्ध किया है।

संस्कृत के लोकसाहित्य के आदिकवि वाल्मीकि के बाद गद्य-पद्य के लाखों श्रव्यकाव्यों और दृश्यकाव्य रूप नाटकों की रचना होती चली, जिनमें अधिकांश लुप्त या नष्ट हो गए। जो स्वल्पांश आज उपलब्ध है, सारा विश्व उसका महत्व स्वीकार करता है। कवि कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तलम् नाटक को विश्व के सर्वश्रेष्ठ नाटकों में स्थान प्राप्त है। अश्वघोष, भास, भवभूति, बाणभट्ट, भारवि, माघ, श्रीहर्ष, शूद्रक, विशाख दत्त आदि कवि और नाटककारों को अपने-अपने क्षेत्रों में अत्यंत उच्च स्थान प्राप्त है।

सर्जनात्मक

संस्कृत भाषा का व्याकरण अत्यन्त परिमार्जित एवं वैज्ञानिक है। बहुत प्राचीनकाल से ही अनेक व्याकरणाचार्यों ने संस्कृत व्याकरण पर बहुत कुछ लिखा है, किन्तु पाणिनि का संस्कृत व्याकरण पर किया गया कार्य सबसे प्रसिद्ध है। उनका अष्टाध्यायी किसी भी भाषा के व्याकरण का सबसे प्राचीन ग्रन्थ है।

ध्वनि-तन्त्र और लिपि

ऐसी भाषा है जिसमें आकृति और ध्वनि का आपस में संबंध होता है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी में अगर आप 'son' या 'sun' का उच्चारण करें तो ये दोनों एक जैसे सुनाई देंगे, बस वर्तनी में ये अलग हैं। आप जो लिखते हैं, वह मानदंड नहीं है। मानदंड तो ध्वनि है क्योंकि आधुनिक विज्ञान यह साबित कर चुका है कि पूरा अस्तित्व ऊर्जा की गूंज है। जहां कहीं भी कंपन है, वहां ध्वनि तो होनी ही है। इसलिए एक तरह से देखा जाय तो पूरा अस्तित्व ध्वनि है। जब आपको यह अनुभव होता है कि एक खास ध्वनि

एक खास आकृति के साथ जुड़ी हुई है, तो यही ध्वनि उस आकृति के लिए नाम बन जाती है। अब ध्वनि और आकृति आपस में जुड़ गईं। अगर आप ध्वनि का उच्चारण करते हैं तो दरअसल आप आकृति की ही चर्चा कर रहे हैं, न सिर्फ अपनी समझ में, न केवल मनोवैज्ञानिक रूप से, बल्कि अस्तित्वगत रूप से भी आप आकृति को ध्वनि से जोड़ रहे हैं। अगर ध्वनि पर आपको महारत हासिल है तो आकृति पर भी आपको महारत हासिल होगी। संस्कृत भाषा हमारे अस्तित्व की रूपरेखा है। जो कुछ भी आकृति में है, हमने उसे ध्वनि में परिवर्तित कर दिया। आजकल इस मामले में बहुत ज्यादा विकृति आ गई है। यह एक चुनौती है कि मौजूदा दौर में इस भाषा को संरक्षित कैसे रखा जाए। इसकी वजह यह है कि इसके लिए जरूरी ज्ञान, समझ और जागरूकता की काफी कमी है।

यही वजह है कि जब लोगों को संस्कृत भाषा पढ़ाई जाती है तो उसे रटाया जाता है। लोग शब्दों का बार-बार उच्चारण करते हैं। इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि उन्हें इसका मतलब समझ में आता है या नहीं, लेकिन ध्वनि महत्वपूर्ण है, अर्थ नहीं।

संस्कृत भारत की कई लिपियों में लिखी जाती रही है, लेकिन आधुनिक युग में देवनागरी लिपि के साथ इसका विशेष संबंध है। देवनागरी लिपि वास्तव में संस्कृत के लिये ही बनी है, इसलिये इसमें हरेक चिह्न के लिये एक और केवल एक ही ध्वनि है। देवनागरी में 13 स्वर और 34 व्यंजन हैं। देवनागरी से रोमन लिपि में लिप्यन्तरण के लिये दो पद्धतियाँ अधिक प्रचलित हैं - IAST और ITRANS. शून्य, एक या अधिक व्यंजनों और एक स्वर के मेल से एक अक्षर बनता है।

संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति का आधार स्तंभ है। संसार की समृद्धतम भाषा 'संस्कृत' के रूप में सबसे उन्नत मानवीय समाज और विज्ञान की स्थापना की गयी। इस देवभाषा के अध्ययन मनन मात्र से ही मनुष्य में सूक्ष्म

विचारशीलता और मौलिक चिंतन जन्म लेता है। सनातन संस्कृति के सभी प्रमुख साहित्यिक और वैज्ञानिक शास्त्र संस्कृत भाषा में ही है।

ऑर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और कंपयूटर क्षेत्र में भी संस्कृत के प्रयोग की संभावनाओं पर फ्रांस, अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी, इंग्लैंड आदि विभिन्न देशों में शोध जारी है। वानस्पतिक सौंदर्य प्रसाधन (हर्बल कॉस्मैटिक्स) एवं आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के तेजी से बढ़ते प्रचलन से संस्कृत की उपयोगिता और बढ़ गयी है, ज़्योंकि आयुर्वेद पद्धतियों का ज्ञान सिर्फ संस्कृत में ही लिपिबद्ध है।

अपनी सुस्पष्ट और छंदात्मक उच्चारण प्रणाली के चलते संस्कृत भाषा को 'स्पीच थेरेपी टूल' (भाषण चिकित्सा उपकरण) के रूप में मान्यता मिल रही है। जर्मन शिक्षाविद् पॉल मॉस के अनुसार ''संस्कृत से सेरेब्रेल कॉर्टेज़्स सक्रिय होता है। अतएव किसी बालक के लिए उँगलियों और जुबान की कठोरता से मुक्ति पाने के लिए देवनागरी लिपि व संस्कृत बोली ही सर्वोत्तम मार्ग है। वर्तमान यूरोपीय भाषाएँ बोलते समय जीभ और मुँह के कई हिस्सों का और लिखते समय उँगलियों की कई हलचलों का इस्तेमाल नहीं किया जाता है।''

वैज्ञानिक कई दिनों तक ऐसी भाषा/लिपि के विकास में थे, जिसका संगणकीय प्रणाली में उपयोग कर, उसका संसार की किसी भी आठ भाषाओं में उसी क्षण रूपांतर हो जाए। अंततोगत्वा 'संस्कृत' ही एकमात्र ऐसी भाषा नजर आई। फोर्ब्स पत्रिका 1985 के अंक के अनुसार दुनिया में अनुवाद के उद्देश्य के लिए उपलज़्ध सबसे अच्छी भाषा संस्कृत है।

वर्तमान में ऑज़्सफोर्ड, कैम्ब्रिज और कोलंबिया जैसे 200 से भी ज्यादा लब्ध-प्रतिष्ठित विदेशी विश्वविद्यालयों में संस्कृत पढ़ायी जा रही है। नासा के पास 60,000 ताड़ के पत्ते की पांडुलिपियां है जो वे अध्ययन का उपयोग कर रहे हैं। माना जाता है कि रूसी, जर्मन, जापानी, अमेरिकी सक्रिय रूप

से हमारी पवित्र पुस्तकों से नई चीजों पर शोध कर रहे हैं और उन्हें वापस दुनिया के सामने अपने नाम से रख रहे हैं।

लंदन और आयरलैण्ड में वहां की शिक्षा में शामिल होने वाली संस्कृत अपनी ही जमीन पर तीसरी भाषा के स्थान पर स्वीकार की गई है। भारत की वर्तमान एवं भावी पीढ़ी अत्यंत संवेदनशील है। उन्हें संस्कृत की महानता समझने और समझाने की जरूरत है। अगर स्मृति तीव्र करना हो, ज़्लड सर्कुलेशन संतुलित करना हो और जीभ की मांसपेशियों का व्यायाम कराना हो तो सभी स्थितियों में संस्कृत शज़्दों का उच्चारण करना चाहिए।

दुनिया के 17 देशों में एक या अधिक संस्कृत विश्वविद्यालय संस्कृत के बारे में अध्ययन और नई प्रौद्योगिकी प्राप्त करने के लिए है। जो है भी वहाँ संस्कृत केवल साहित्य और कर्मकाण्ड तक सीमित है, विज्ञान के रूप में नहीं। भारत को विश्वगुरु और विश्व में सिरमौर बनाने के लिए संस्कृत के पुनरुत्थान की आवश्यकता है। संस्कृत हमारी विरासत है और उस पर हमारा ही जन्म-सिद्ध अधिकार है।

नासा के वैज्ञानिक रिक ब्रिग्स ने 1985 में भारत से संस्कृत के एक हजार प्रकांड विद्वानों को बुलाया था। उन्हें नासा में नौकरी का प्रस्ताव दिया था। उन्होंने बताया कि संस्कृत ऐसी प्राकृतिक भाषा है, जिसमें सूत्र के रूप में कंप्यूटर के जरिए कोई भी संदेश कम से कम शज़्दों में भेजा जा सकता है। विदेशी उपयोग में अपनी भाषा की मदद देने से उन विद्वानों ने इन्कार कर दिया था।

नासा के वैज्ञानिकों की मानें तो जब वह स्पेस ट्रैवलर्स को मैसेज भेजते थे तो उनके वाक्य उलटे हो जाते थे। इस वजह से मैसेज का अर्थ ही बदल जाता था। उन्होंने दुनिया के कई भाषा में प्रयोग किया, लेकिन हर बार यही समस्या आई। आखिर में उन्होंने संस्कृत में मैसेज भेजा, क्योंकि संस्कृत के वाक्य उलटे हो जाने पर भी अपना अर्थ नहीं बदलते हैं। यह रोचक जानकारी

हाल ही में एक समारोह में दिल्ली सरकार के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के निदेशक डॉ. जीतराम भट्ट ने दी।

संस्कृत भाषा वर्तमान में 'उन्नत किर्लियन फोटोग्राफी' तकनीक में इस्तेमाल की जा रही है। वर्तमान में उन्नत किर्लियन फोटोग्राफी तकनीक सिर्फ रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका में ही मौजूद हैं। भारत के पास आज 'सरलकिर्लियन फोटोग्राफी' भी नहीं है।

भारतीय वैज्ञानिकों को नव अनुसंधान की प्रेरणा संस्कृत से मिली। जगदीश चन्द्र बसु, चंद्रशेखर वेंकटरमण, आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय, डॉ. मेघनाद साहा जैसे विश्व विख्यात वैज्ञानिकों को संस्कृत भाषा से अत्यधिक प्रेम था और वैज्ञानिक खोजों के लिए वे संस्कृत को ही आधार मानते थे। इनके अनुसार संस्कृत का प्रत्येक शब्द वैज्ञानिकों को अनुसंधान के लिए प्रेरित करता है। प्राचीन ऋषि-महर्षियों ने विज्ञान में जितनी उन्नति की थी, वर्तमान में उसका कोई मुकाबला नहीं कर सकता। महर्षियों का संपूर्ण ज्ञान एवं सार संस्कृत भाषा में निहित है। आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय विज्ञान के लिए संस्कृत शिक्षा को आवश्यक मानते थे। जगदीश चन्द्र बसु ने अपने अनुसंधानों के स्रोत संस्कृत में खोजे थे। डॉ. साहा अपने घर के बच्चों की शिक्षा संस्कृत में ही कराते थे और एक वैज्ञानिक होने के बावजूद काफी समय तक वे स्वयं बच्चों को संस्कृत पढ़ाते थे।

आधुनिक विज्ञान सृष्टि के रहस्यों को सुलझाने में बौना पड़ रहा है। अलौकिक शक्तियों से संपन्न मंत्र-विज्ञान की महिमा से आज का विज्ञान भी अनभिज्ञ है। उड़न तश्तरियाँ कहाँ से आती हैं और कहाँ गायब हो जाती हैं, इस प्रकार की कई बातें हैं जो आज भी विज्ञान के लिए रहस्य बनी हुई हैं। प्राचीन संस्कृत ग्रंथों से ऐसे कई रहस्यों को सुलझाया जा सकता है।

आर्यभट्ट का शून्य सिद्धांत, कणाद ऋषि का परमाणु सिद्धांत और भास्कराचार्य का सूर्य सिद्धांत न होता तो शायद विज्ञान आज इस शिखर पर

न होता। विमान विज्ञान, नौका विज्ञान से संबंधित कई महत्वपूर्ण सिद्धान्त हमारे ग्रंथों से प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार के और भी अनगिनत सूत्र हमारे ग्रंथों में समाये हुए हैं, जिनसे आधुनिक विज्ञान को अनुसंधान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश मिल सकते हैं। आज अगर विज्ञान के साथ संस्कृत का समन्वय कर दिया जाय तो अनुसंधान के क्षेत्र में बहुत उन्नति हो सकती है। हिन्दू धर्म के प्राचीन महान ग्रंथों के अलावा बौद्ध, जैन आदि धर्मों के अनेक मूल धार्मिक ग्रंथ भी संस्कृत में ही हैं।

संस्कारी जीवन की नींव

संस्कृत वर्तमान समय में भौतिक सुख-सुविधाओं का अंबार होने के बावजूद भी मानव-समाज अवसाद, तनाव, चिंता और अनेक प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त है, ज़्योंकि केवल भौतिक उन्नति से मानव का सर्वांगीण विकास संभव नहीं है। इसके लिए आध्यात्मिक उन्नति अत्यंत जरूरी है। जिस समय संस्कृत का बोलबाला था उस समय मानव-जीवन ज्यादा संस्कारित था। यदि समाज को फिर से वैसा संस्कारित करना हो तो हमें फिर से सनातन धर्म के प्राचीन संस्कृत ग्रंथों का सहारा लेना ही पड़ेगा। ❍❍❍

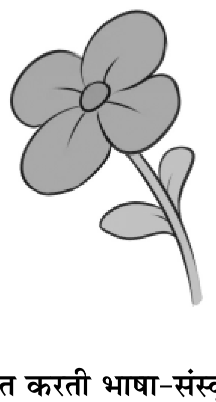

वेदव्यासों द्वारा वेद मन्त्रों का संकलन

28 वेदव्यास हुए थे अर्थात् 28 बार वेदों का संकलन हुआ। कई बार वेद लुप्त भी हुए हैं। उनका हयग्रीव, वराह तथा मत्स्य अवतारों द्वारा उद्धार हुआ है।

ऋक् वेद की सभी 21 संहितायें ऋक् वेद हैं। उनमें अभी 3 उपलज़्ध हैं-शाकल्य, वाष्कल, शांख्यायन। इसी प्रकार यजुर्वेद की सभी 101 शाखायें यजुर्वेद हैं। शुक्ल की 2 तथा कृष्ण की 4 शाखा उपलब्ध हैं-काण्व, माध्यन्दिन, तैत्तिरीय, मैत्रायणी, काठक, कपिष्ठल। सामवेद की आकाश में 1000 तथा शब्द रूप में 13 शाखा हैं जिनमें 3 उपलज़्ध हैं-कौथुमी, जैमिनीय, राणायनीय। अथर्ववेद की आकाश में 50 तथा शब्द रूप में 9 शाखा हैं जिनमें 2 उपलज़्ध हैं-शौनक, पैप्पलाद।

वेद मन्त्र समझने लायक, भाषा, व्याकरण, छन्द, निरुक्त, ज्योतिष, कल्प, शिक्षा का जब तक विकास नहीं होगा तब तक किसी भी मनुष्य को तथाकथित ईश्वर वेद नहीं दे सकता। इसमें प्रत्येक मन्त्र में ऋषि के उल्लेख से ही स्पष्ट है कि भिन्न-भिन्न स्थान और काल के ऋषियों को मन्त्र का दर्शन हुआ था। इनका संकलन 28 बार 28 व्यासों द्वारा हुआ है।

ब्रह्म के कई स्तर हैं। परात्पर में निर्विशेष या सविशेष द्वारा कोई मन्त्र नहीं दिया जा सकता। ईश्वर रूप सभी प्राणियों के हृदय में रह कर नियन्त्रण करता है। (गीता, 18/61) उसकी प्रेरणा से अनुभव हो सकता है। वह परा वाणी के स्तर पर होगा। उसको पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी के स्तर पर व्यक्त करना मनुष्य ऋषि का काम है। अव्यक्त परा वाक् को व्यक्त वाणी

के मन्त्र में प्रकट करने से वह शाश्वत होता है जैसा ईशावास्योपनिषद (काण्व संहिता, अध्याय 40) में लिखा है—

स पर्यगात् शुक्रं अकायं अस्नाविरं, शुद्धं अपापविद्धं कवि: मनीषी परिभू: स्वयम्भू: याथातथ्यतो अर्थान् व्यदधात् शाश्वतीभ्य: समाभ्य:।

मनुष्य ऋषियों द्वारा अलग-अलग मन्त्र का दर्शन होने पर भी 3 प्रकार से वेद अपौरुषेय है—

(1) मन्त्र दर्शन के समय ऋषि अपने व्यक्तित्व से स्वतन्त्र था।

(2) यह किसी एक व्यक्ति का मत नहीं है। भिन्न-भिन्न ऋषियों के मन्त्रों के संकलन रूप में औसत है।

(3) 5 प्रकार के ज्ञानेन्द्रिय द्वारा प्राप्त ज्ञान के अतिरिक्त इसमें 2 प्रकार के अतीन्द्रिय ज्ञान भी हैं। इनके माध्यम के रूप में 5 सत् प्राण तथा 2 अतिरिक्त असत् प्राण (परोरजा, ऋषि) वेद में वर्णित हैं।

❍❍❍

आधुनिक विज्ञान से संबंधित ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति

आधुनिक विज्ञान से संबंधित ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति की यही बात प्राचीन वैज्ञानिक भारतीय दर्शन में इस तरह से आई है—

प्रारंभ में एक शान्त सत् चित् आनन्द तत्त्व ही सर्वत्र विद्यमान् था। उस चैतन्य तत्त्व में एक संकल्परूपी तरंग उत्पन्न हुई *एकोहं बहुस्या* और इस संकल्प भावना से वह अनेक हो गया।

सबसे पहले निराकार परम चेतन तत्त्व आत्मा से अव्यक्त, फिर अव्यक्त से महत्, महत् तत्त्व से अहंकार, अहंकार से पाँच सूक्ष्म तन्मात्राएँ, उन तन्मात्राओं से स्थूल पाँच तत्त्व उत्पन्न हुए।

आकाश तत्त्व से वायु तत्त्व की उत्पत्ति, स्थिति और लय तीनों होते हैं; यही बात अब परमात्मा स्वरूप भगवान श्रीकृष्ण अपने शिष्य नरऋषि अर्जुन को *श्लोक 9.6* में समझाते हैं – *आकाश से उत्पन्न होने वाला वायु, आकाश में ही स्थित है। लेकिन वायु व अन्य तत्त्वों से भरा दिखने पर भी आकाश उनसे पूर्णतः निर्लिप्त है; किसी भी अन्य तत्त्व से आकाश दूषित नहीं हो सकता।*

ऐसे ही मैं आत्मस्वरूप परमात्मा सभी भूतों का उत्पत्ति, स्थिति व लय का कारण हूँ। मुझसे ही इन सभी जड़-चेतन जीवों की उत्पत्ति होती है। इन सबकी मुझमें ठीक वैसे ही स्थिति है, जैसे कि वायु की सर्वत्र आकाश में- जैसे आकाश निर्लिप्त है; ठीक ऐसे ही आत्मा भूतादि से पूर्णतः निर्लिप्त है।

आघात/कष्ट पंचभूतों से बने शरीर को होता है; सुख व दुःख मन को होते हैं, भ्रम/अनिश्चय की स्थिति बुद्धि में होती हैं।

लेकिन ये सब आत्मा के गुण-धर्म नहीं हैं, क्योंकि मैं आत्मा निराकार निर्गुण तत्त्व हूँ। * निर्लेप आत्मस्वरूप मैं ही परम तत्त्व परमात्मा हूँ।*

❍❍❍

वेदों में है ब्रह्माण्ड का ध्वनि विज्ञान

वेद ज्ञान को आधार मान कर न्यूजीलैंड के एक वैज्ञानिक स्टेन क्रो ने एक डिवाइस विकसित कर लिया। ध्वनि पर आधारित इस डिवाइस से मोबाइल की बैटरी चार्ज हो जाती है। इसे बिजली की आवश्यकता नहीं होती है। भारत के वरिष्ठ अंतरिक्ष वैज्ञानिक ओमप्रकाश पांडे के मुताबिक इस डिवाइस का नाम भी 'ओम' डिवाइस रखा गया है। उन्होंने कहा कि संस्कृत को अपौरुष भाषा इसलिए कहा जाता है कि इसकी रचना ब्रह्मांड की ध्वनियों से हुई है।

उन्होंने बताया कि गति सर्वत्र है। चाहे वस्तु स्थिर हो या गतिमान। गति होगी तो ध्वनि निकलेगी। ध्वनि होगी तो शब्द निकलेगा। सौर परिवार के प्रमुख सूर्य के एक ओर से नौ रश्मियां निकलती हैं और ये चारों ओर से अलग-अलग निकलती है। इस तरह कुल 36 रश्मियां हो गई। इन 36 रश्मियों के ध्वनियों पर संस्कृत के 36 स्वर बने। इस तरह सूर्य की जब नौ रश्मियां पृथ्वी पर आती है तो उनका पृथ्वी के आठ बसुओं से टक्कर होती है। सूर्य की नौ रश्मियां और पृथ्वी के आठ वस्तुओं की आपस में टकराने से जो 72 प्रकार की ध्वनियां उत्पन्न हुई, वे संस्कृत के 72 व्यंजन बन गई। इस प्रकार ब्रह्मांड में निकलने वाली कुल 108 ध्वनियां पर संस्कृत की वर्ण माला आधारित है।

उन्होंने बताया कि ब्रह्मांड की ध्वनियों के रहस्य के बारे में वेदों से ही जानकारी मिलती है। इन ध्वनियों को नासा ने भी माना है। इसलिए यह बात साबित होती है कि वैदिक काल में ब्रह्मांड में होने वाली ध्वनियों का ज्ञान ऋषियों को था।

वेद का प्रत्येक शब्द यौगिक है। जैसे कुरान में अकबर का नाम होने से

कुरान को मुगल बादशाह अकबर के बाद का नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार कृष्ण, अर्जुन, भारद्वाज आदि नाम वेदों में होने से उनको वेद से पहले नहीं माना जा सकता। वेदों के शब्द पहले के और मनुष्यों के बाद के हैं। योगिक अर्थ की एक झलक इस प्रकार है—

भारद्वाज = मन, अर्जुन = चन्द्रमा, कृष्ण = रात्रि।

जिन्होंने योगिक अर्थों को समझा, उन्होंने ऐसी-ऐसी खोज की, भला कैसी ? तो जानिए —

1. प्लास्टिक सर्जरी - माथे की त्वचा द्वारा नाक की मरम्मत। सुश्रुत (4000-2000 ईसा पूर्व), एक जर्मन विज्ञानी (1968)।
2. कृत्रिम अंग ऋग्वेद (1-116-15)।
3. गुण सूत्र गुणाविधि-महाभारत।
4. गुण सूत्रों की संख्या 23 महाभारत।
5. कान की भौतिक रचना (Anatomy) ऋग्वेद।
6. गर्भावस्था के दूसरे महीने में भ्रूण के ह्रदय की शुरुआत। ऐतरेय उपनिषद 6000
7. महिला अकेले से वंशवृद्धि प्रजनन-कुंती और माद्री-पांडव महाभारत - टेस्ट ट्यूब बेबी।
8. (अ) केवल डिंब (ovum) से ही महाभारत Not possible yet.
9. (ब) केवल शुक्राणु से ही ऋग्वेद & महाभारत Not possible yet.
10. (स) डिंब व शुक्राणु दोनों से महाभारत Steptoe, 1979
11. भ्रूण विज्ञान ऐतरेय उपनिषद।
12. विट्रो में भ्रूण का विकास महाभारत।
13. पेड़ों और पौधों में जीवन महाभारत Bose, 19th Century.

14. मस्तिष्क के 16 कार्य ऐतरेय उपनिषद 19-20th Century.
15. जानवर की क्लोनिंग (कत्रिम उत्पति) ऋग्वेद—
16. मनुष्य की क्लोनिंग मृत राजा वीणा से पृथु अभी तक नहीं।
17. अश्रु-वाहिनी आँख को नाक से जोड़ती है।
Halebid, Karnataka के शिव मंदिर में एक व्यक्ति को द्वार चौखट में दर्शाया गया है।
20th Century AD
18. कंबुकर्णी नली (Eustachian Tube) आंतरिक कान को ग्रसनी (pharynx) से जोड़ती है।
Halebid, Karnataka के शिव मंदिर में शिव गणों को द्वार चौखट में दर्शाया गया है।
20th Century AD
19. श्याम विविर (Black Holes) Vishvaruchi (मांडूक्य उपनिषद)।
20th Century
20. सूरज की किरणों में सात रंग ऋग्वेद (8-72-16)। ❍❍❍

आश्चर्यजनक किंतु सत्य!

संस्कृत किस तरह भारत की नींव में ही नहीं अपितु विदेशों में भी कितनी मजबूती से समाई हुई है, इसके उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(थोड़ा बड़ा अवश्य है, परंतु पूरा पढ़ने की विनती है आपसे।)

विभिन्न संस्थाओं के संस्कृत ध्येय वाक्य :

- भारत सरकार — सत्यमेव जयते
- लोक सभा — धर्मचक्र प्रवर्तनाय
- उच्चतम न्यायालय — यतो धर्मस्ततो जय:
- आल इंडिया रेडियो — सर्वजन हिताय सर्वजनसुखाय
- दूरदर्शन — सत्यं शिवं सुन्दरम्
- गोवा राज्य — सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दु:खभाग्भवेत्।
- भारतीय जीवन बीमा निगम — योगक्षेमं वहाम्यहम्
- डाक तार विभाग — अहर्निशं सेवामहे
- श्रम मंत्रालय — श्रम एव जयते
- भारतीय सांख्यिकी संस्थान — भिन्नेष्वेकस्य दर्शनम्ज़
- थल सेना — सेवा अस्माकं धर्म:
- वायु सेना — नभ:स्पृशं दीप्तम्
- जल सेना — शं नो वरुण:

- मुंबई पुलिस — सद्रक्षणाय खलनिग्रहणाय
- हिंदी अकादमी — अहं राष्ट्री संगमनी वसूनाम्
- राष्ट्रवादी लेखक संघ — राष्ट्रीय स्वाहा, इदं न मम
- भारतीय राष्ट्रीय विज्ञानं अकादमी
  — हव्याभिर्भग: सवितुर्वरेण्यम्
- भारतीय प्रशासनिक सेवा अकादमी
  — योग: कर्मसु कौशलम्
- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग — ज्ञान-विज्ञानं विमुक्तये
- नेशनल कौंसिल फॉर टीचर एजुकेशन
  — गुरुर्गुरुतमो धाम
- गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय
  — ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत
- इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय
  — ज्योतिर्व्रणीत तमसो विज्ञानन
- काशी हिन्दू विश्वविद्यालय — विद्याऽमृतमश्नुते
- आन्ध्र विश्वविद्यालय — तेजस्विनावधीतमस्तु
- बंगाल अभियांत्रिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, शिवपुर
  — उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत
- गुजरात राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय
  — आनो भद्रा: क्रतवो यन्तु विश्वत:
- संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय — श्रुतं मे गोपाय
- श्री वैंकटेश्वर विश्वविद्यालय — ज्ञानं सम्यग् वेक्षणम्

- कालीकट विश्वविद्यालय — निर्भय कर्मणा श्री
- दिल्ली विश्वविद्यालय — निष्ठा धृतिः सत्यम्
- केरल विश्वविद्यालय — कर्मणि व्यज्यते प्रज्ञा
- राजस्थान विश्वविद्यालय — धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा
- पश्चिम बंगाल राष्ट्रीय न्यायिक विज्ञान विश्वविद्यालय
  — युक्तिहीने विचारे तु धर्महानिः प्रजायते
- वनस्थली विद्यापीठ — सा विद्या या विमुक्तये।
- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
  — विद्याऽमृतमश्नुते
- केन्द्रीय विद्यालय — तत् त्वं पूषन् अपावृणु
- केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड — असतो मा सद्गमय
- प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, त्रिवेन्द्रम
  — कर्मज्यायो हि अकर्मणः
- देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर
  — धियो यो नः प्रचोदयात्
- गोविंद बल्लभ पंत अभियांत्रिकी महाविद्यालय, पौड़ी
  — तमसो मा ज्योतिर्गमय
- मदनमोहन मालवीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, गोरखपुर
  — योगः कर्मसु कौशलम्
- भारतीय प्रशासनिक कर्मचारी महाविद्यालय, हैदराबाद]
  — संगच्छध्वं संवदध्वम्

- इंडिया विश्वविद्यालय का राष्ट्रीय विधि विद्यालय
  — धर्मो रक्षति रक्षित:
- संत स्टीफन महाविद्यालय, दिल्ली
  — सत्यमेव विजयते नानृतम्
- अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान
  — शरीरमाद्यं खलुधर्मसाधनम्
- विश्वेश्वरैया राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, नागपुर
  — योग: कर्मसु कौशलम्
- मोतीलाल नेहरू राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, इलाहाबाद
  — सिद्धिर्भवति कर्मजा
- बिरला प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान संस्थान, पिलानी
  — ज्ञानं परमं बलम्
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान खड़गपुर
  — योग: कर्मसुकौशलम्
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुंबई
  — ज्ञानं परमं ध्येयम्

  तथा एडमिन बिल्डिंग पर — सा विद्या वा विमुक्तये
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर
  — तमसो मा ज्योतिर्गमय
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, चेन्नई
  — सिद्धिर्भवति कर्मजा
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की
  — श्रमं विना नकिमपि साध्यम्

- भारतीय प्रबंधन संस्थान, अहमदाबाद
  — विद्या विनियोगाद्विकासः
- भारतीय प्रबंधन संस्थान, बंगलौर
  — तेजस्वि नावधीतमस्तु
- भारतीय प्रबंधन संस्थान, कोझीकोड
  — योगः कर्मसु कौशलम्
- सेना ई एम ई कोर — कर्मह हि धर्मह
- सेना राजपूताना रायफल — वीर भोग्या वसुन्धरा
- सेना मेडिकल कोर — सर्वेसंतु निरामया
- सेना शिक्षा कोर — विद्यैव बलम्
- सेना एयर डिफेन्स — आकाशेय शत्रुन् जहि
- सेना ग्रेनेडियर रेजिमेन्ट — सर्वदा शक्तिशालिम्
- सेना राजपूत बटालियन — सर्वत्र विजये
- सेना डोगरा रेजिमेन्ट — कर्तव्यम् अन्वात्मा
- सेना गढवाल रायफल — युद्धया कृत निश्चयः
- सेना कुमायू रेजिमेन्ट — पराक्रमो विजयते
- सेना महार रेजिमेन्ट — यश सिद्धि ?
- सेना जम्मू-कश्मीर रायफल — प्रस्थ रणवीरता ?
- सेना कश्मीर लाइट इंफैन्ट्री — बलिदानं वीर-लक्ष्यम् ?
- सेना इंजीनियर रेजिमेन्ट — सर्वत्र
- भारतीय तट रक्षक — वयम् रक्षामः
- सैन्य विद्यालय — युद्धं प्रगायय ?
- सैन्य अनुसंधान केंद्र — बलस्य मूलं विज्ञानम्

यह सिलसिला यहीं खत्म नहीं होता,'विदेशी' भी हमारे कायल हैं। देखिये जरा कैसे—

- नेपाल सरकार — जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी
- इंडोनेशिया जल सेना

  — जलेष्वेव जयामहे (इंडोनेशिया)-पञ्चचित
- कोलंबो विश्वविद्यालय (श्रीलंका) — बुद्धिः सर्वत्र भ्राजते
- मोराटुवा विश्वविद्यालय (श्रीलंका)

  — विद्यैव सर्वधनम्पेरादेपञ्चचित
- पेरादेनिया विश्वविद्यालय — सर्वस्य लोचनशास्त्रम्

❍❍❍

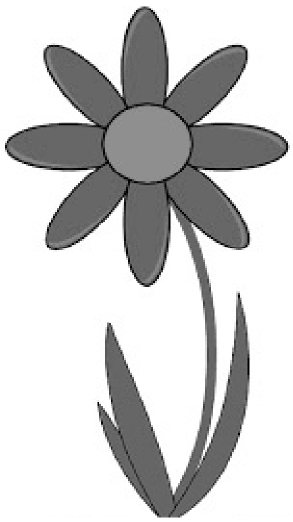

वेद और विज्ञान

वेद शब्द का अर्थ ही ज्ञान होता है और जो विशेष ज्ञान है उसको विज्ञान कहते हैं। पूरे संसार में अनेक प्रकार के ज्ञान-विज्ञान का पढ़ना-पढ़ाना प्रचलित है, परन्तु इन सब ज्ञान-विज्ञान का मूल स्रोत क्या है ? ये सब ज्ञान-विज्ञान आये कहाँ से ? कुछ लोगों का कहना है कि अलग-अलग विद्वानों ने अपनी-अपनी बुद्धि, योग्यता, अनुभव व सामर्थ्य से नये-नये ज्ञान का खोज करके लोगों के सामने उपस्थापित कर दिया।

''**स एषः पूर्वेषामपि गुरुः...**''-(योग॰) अर्थात् सभी गुरुओं का गुरु परमेश्वर ही है और परमेश्वर का दिया हुआ ज्ञान ही वेद है।

जब हम विज्ञान कहते हैं तो आधुनिक वैज्ञानिकों की भौंवे तिरछी हो जाती है। यह कैसे हो सकता है कि वेद में लिखा हो जिसका आविष्कार ही बाद में हुआ है। पाश्चात्य जगत की उत्पत्ति और सभ्यता 4000 वर्षों में सिमट कर रह गयी है और वे इसके बियॉन्ड न तो सोच सकते हैं न सोचने देते हैं। कोई यह कह दे कि 5100 वर्ष पूर्व कृष्ण हुए थे तो वे इसे कल्पना और मिथ कह कर नकार देते हैं और साक्ष्य मांगते हैं। साक्ष्य भी इन्हें वही पसंद है जो इनके मन मुआफ़िक हो। इनकी दौड़ सिंधु घाटी की सभ्यता तक जाती है, क्योंकि यह इन्हें सूट करता है।

एक बात स्पष्ट होनी चाहिए कि वेदों में जो विज्ञान है वह रासायनिक भौतिक सभी विषयों पर है और वेद विज्ञान के अलावा कुछ नहीं, कोई इसे इतिहास या धार्मिक पूजा-पाठ का ग्रंथ मानता है तो भूल करता है। वेदों के मंत्रों कों सहज समझाने के लिए कथाएं रची गयी, जिसका तालमेल इतिहास से कर दिया गया। जैसे-सामवेद में 257 संख्या की ऋचा है जिसमें कहा गया है

प्र व इन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत।
वृत्रः हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा॥

इसका वास्तविक अर्थ है; वृत्र मेघ को भी कहते हैं तो इन्द्र रूपी ऋतु संहारक मरुत से कहते हैं, आप आकर मेघों का संहार करके जल वृष्टि करें। यह वैज्ञानिक कथन से बताया गया है कि जब मेघ नभ को अंधकारमय कर देते हैं तब मरुत झंझा चल कर इन्हें हटा देती है और कहीं वृष्टि होती है और गगन पुनः प्रकाशवान होता है।

शाब्दिक अर्थ अगर अध्यात्म से देखें तो वेदालंकार आचार्य रामानुज के अनुसार यह है।

परमात्मा के पक्ष में। हे (मरुतः) मेरे प्राणो! (वः) तुम (बृहते) महान् (इन्द्राय) परमेश्वर के लिए (ब्रह्म) साम-स्तोत्र को (प्र अर्चत) प्रेरित करो। वह (वृत्रहा) पापहन्ता (शतक्रतुः) अनन्त प्रज्ञावाला तथा अनन्त कर्मोंवाला परमेश्वर, अपने (शतपर्वणा) बहुमुखी (वज्रेण) वीर्य से (वृत्र) पाप को (हनति) नष्ट करे।

अब इस मंत्र को आधार मानकर पुराणकारों ने समझाने के लिए वृत्रासुर की कथा रच ली कि वृत्रासुर को इन्द्र ने तीरों से संहार किया। यहाँ मरुत को तीरों के रूप में लिया गया। यह बताया गया कि वृत्रासुर की कथा वैदिक इतिहास है।

इस प्रकार के उदाहरण मिलते हैं। वामन की कथा भी इसी प्रकार गढ़ी गयी है।

एक बात और स्पष्ट होनी चाहिए कि वैदिक सूत्र विज्ञान के सूत्र देते हैं न कि विस्तृत क्रिया और गुणनफल। जैसे ऋग्वेद 3.29.2 कहता है ''अरण्यो निहितो जातवेदाः॰'' (ऋ.3.29.2) अर्थात् दो लकड़ियों को रगड़ कर अग्नि का आविष्कार किया जाता है। यह निर्देश है, अब इसको विस्तार देकर हमें जानना होगा कि इसकी विधि क्या है। कितनी ऊर्जा,

कितनी अग्नि उत्पन्न होगी। यह गुणनफल आधुनिक विज्ञान ने किया, अत: हम आज के विज्ञान को सिरे से नहीं नकार सकते और पूरा श्रेय वेदों को नहीं दे सकते। यही बात विमान के बारे में है, जबकि वेदों से संकेत लेकर बाद में वृहद विमान शास्त्र भी लिखा गया और वह भी आधुनिक वैज्ञानिकों से पहले का है, परन्तु हम यह नहीं कह सकते कि वेदों में विमान का विज्ञान था।

वैसे तो वेद के अन्दर अनेक विषयक विज्ञान सम्बन्धी निर्देश भरे पड़े हैं, परन्तु हम कुछ ही बिन्दुओं का संकेतात्मक दिग्दर्शन करने का प्रयास करेंगे। जैसे कि यजुर्वेद में कहा–''विश्वस्यदूतममृतम्॰'' (यजुर्वेद :- 15.33) अर्थात् अग्नि (ऊर्जा) संसार का अमर दूत है, उसमें सम्प्रेषण शक्ति स्थित है। ऋग्वेद में कहा–''श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभि:॰'' (ऋ.1.44.13) अर्थात् विद्युत् में श्रवण शक्ति विद्यमान है। ''सूरात् अश्वं वसवो निरतष्ट॰'' (ऋ.1.163.2) अर्थात् वैज्ञानिकों ने सूर्य से अश्व शक्ति वा सौर ऊर्जा को निकाला। ''चकृषे भूमिं प्रतिमानं''....(ऋ.1.52.12) अर्थात् सूर्य भूमि को आकर्षित किया हुआ है। ''अग्निषोमौ बिभ्रति आप इत् ता:'' (अथर्व.3.13.5) अर्थात् जल के अन्दर ऑक्सीजन और हाईड्रोजन विद्यमान है। ''प्रसोमासो विपश्चितो अपां न यन्ति ऊर्मय:'' (ऋ.9.33.1) अर्थात् चन्द्रमा के आकर्षण से समुद्र की लहरें ऊपर उठती हैं। ''शकमयं धूमम् आरादपश्यम्...'' (ऋ.1.164.43) अर्थात् सूर्य की चारों ओर शक्तिशाली गैस फैली हुई है। अब हम यह कह दें कि सोलर पावर तो हमारी देन है। वेदों में लिखा है तो आंशिक सत्य होगा। वेदों में कहा है कि सूर्य में सौर ऊर्जा है, पर विस्तार और विधि तो आधुनिक विज्ञान ने ही दिया।

उपरोक्त कुछ सूक्त या ऋचाएं या मन्त्र उदाहरण के रूप में बताए गए हैं।

आज भी आधुनिक विज्ञान में किसी भी आविष्कार के पहले या किसी भी नवनिर्माण के पहले एक कल्पना बनाई जाती है। फिर उसे मूर्त रूप देने के लिए डिटेलिंग की जाती है। मेरा तो स्पष्ट मानना है कि पाश्चात्य जगत के विज्ञान की खोज में भारतीय वेदों का बहुत बड़ा हाथ है। जिसके सूक्तों को डिकोड करके कल्पना अर्जित की गई, बाद में वहां के वैज्ञानिकों ने डिटेलिंग करके वह अविष्कार विश्व को दिया।

क्वाण्टम थ्योरी हो या सापेक्ष थ्योरी हो, बिग बैंग, गॉड पार्टिकल हर थ्योरी का जो मूल मंत्र है, हमें वेदों में मिल जाता है। यह कोई संयोग नही बल्कि सिद्ध साक्ष्य है। ❍❍❍